पात्र-सूची

पुरुष

विक्रमादित्य ...	महाराणा संग्रामसिंह, सांगा, और महारानी जवाहरबाई के पुत्र, मेवाड़ के महाराणा
उदयसिंह ...	महाराणा संग्रामसिंह और महारानी कर्मवती का पुत्र
हुमायूँ ...	दिल्ली का बादशाह
बहादुरशाह	गुजरात का बादशाह
बाघसिंह	महाराणा विक्रमसिंह के चाचा, प्रतापगढ़ के राव
तातारखाँ	बहादुरशाह का भाई
रूमीखाँ	गुजरात का तोपची
शाह शेख औलिया	बहादुरशाह का उन्मत्त धर्म-गुरु
[illegible]	मेवाड़ के सामंतों का नायक
विजय	महाराणा विक्रमादित्य के बड़े भाई स्वर्गीय महाराणा रत्नसिंह का बेटा
धनदास	मेवाड़ का एक सेठ
श्रीरंजन ..	धनदास का पुत्र
तातारखाँ, हिंदूबेग ...	हुमायूँ के सेनापति
[illegible] ...	दोनों ओर सैनिक
अर्जुनसिंह ...	बूँदी का राजकुमार, कर्मवती का भाई

स्त्री

कर्मवती	...	स्वर्गीय महाराणा साँगा की पत्नी, उद सिंह की माँ
जवाहरबाई	...	स्वर्गीय महाराणा साँगा की पत्नी, विक्र दित्य की माँ
श्यामा	...	भील-पुत्री, जिसका विवाह महाराणा वि दित्य के बड़े भाई स्व० महाराणा रत्नसि के पुत्र से हुआ था, विजयसिंह की माँ
माया	...	धनदास की पत्नी
चारणी	...	मेवाड़ की गौरव-गाथा गानेवाली

रक्षा-बंधन

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान—चित्तौड़ के महाराणा विक्रमादित्य का भवन

समय—रात्रि का प्रथम चतुर्थांश

[महाराणा विक्रमादित्य का सिंहासन खाली है। सेठ धनदास और अन्य मुसाहिब बैठे बात-चीत कर रहे हैं।]

एक मुसाहिब—बस युद्ध ही युद्ध ! मेवाड़ियों को दिन-रात, सोते-जागते, खाते-पीते, एक ही बात ! युद्ध !

धनदास—सीसौदिया-वंश की पीढ़ियाँ युद्ध करते बीत गईं मेवाड़ का इतिहास रक्त से रँग गया, पर मिला क्या ! महाराणा कुंभा, महाराणा सांगा, वीर पृथ्वीराज, महाराणा रत्नसिंह आदि सभी को जल्द-से-जल्द स्वर्ग की सीढ़ी पर क़दम रखना पड़ा ! भला मरने की ऐसी जल्दी क्यों !

दूसरा मुसाहिब—देश की नाक रखने के लिए !

धन०—ह-हा-हा ! देश की नाक ! खूब ! देश के नाक होती है !

ही नर्तकियों, पटरानियों, दासियों और नौकरों और इन सब के स्वच्छन्द वृत्तियों पर भी शासन और उनके मन पर पूर्ण अधिकार हो। जो इन्हें वश नहीं कर सकता, उसका राज भी कुछ दिनों तक [illegible] राजनीतिज्ञ नहीं हो सकता। अतः [illegible] लोग राजनीति का अर्थ ही नहीं समझते!

पहला मुसाहिब—अच्छा तो, आप ही कहिए, आखिर राजनीति है क्या बला?

धन०—थोड़े शब्दों में राजनीति का अर्थ है बहुरूपियापन! सच्चा राजनीतिज्ञ वही है, जो समय देख कर, नीति, राष्ट्रीयता, जाति, धर्म सब कुछ बदल सके। जिसका अपना कोई सिद्धान्त न हो! जो समय की गति के विरुद्ध अपने सिद्धान्तों में चिपके रहने की [illegible], सर्वसाधारण प्रकट न करे।

विक्रम—बस बहुत हुआ! समाप्त करो अपना यह राजनीति-महाभाष्य! मुसाहिब जी, नर्तकी को बुलाओ, जिससे कुछ मनोरंजन हो!

पहला मुसाहिब—उठ कर [illegible] (प्रस्थान)

विक्रम—क्यों मेरे धनदास जी, यह कैसे हो सकता है कि [illegible] से [illegible] को स्फुरित करने [illegible] समाधि को विचलित कर दिया जाय?

धन०—निस्संदेह, अन्नदाता! दक्षिण-पवन तो तपोवन में भी जाने से न चूका था! गौतम ऋषि के आश्रम में एक दिन वसंत, कंदर्प, चंद्र, और इन्द्र ने जो उत्पात मचाया था वह

विक्रम—चाचाजी, आपने मेरा अपमान……!

बाघसिंह—ऐसा पतन ! महाराणा के सम्मान का एक नर्तकी के मान से गठ-बंधन ! मेवाड़ की इज्जत धूल में न मिलाओ, विक्रम ! देखो, आँखें खोल कर देखो ! उस कराल देवी के मन्दिर की तरफ देखो। वे रूठ कर जा रही हैं। वे दैत्य-दल-संहारिणी, तड़ित्-असि-धारिणी, मुंडों की माला पहन कर श्मशान पर तांडव-नृत्य करने वाली, जिनके आशीर्वाद से मेवाड़ के वीर मरण को वरण करते आये हैं, देखो रूठ कर जा रही हैं। विक्रम ! तुमने उनके स्थान पर रति की आराधना आरम्भ की है। उन्हें मनाओ, मेरे लाल, उन्हें मनाओ !

(विक्रम चुप रहते हैं)

मीरराज—महाराणा ! मैंने अपने अँगूठे के खून से आपका राजतिलक क्या इसीलिए किया था ! मेवाड़ की प्रजा को निर्लज्ज विलासिता का नग्न नृत्य देखने का अभ्यास नहीं है ! जो वीर नागरिक राजाओं के सिर पर मुकुट रख सकते हैं, वे उतार भी सकते हैं !

विक्रम—तुम्हें भी इतना साहस ! तुम नीच और……

(सहसा जवाहरबाई का प्रवेश)

जवाहर—चुप रहो, बहके ! मैंने सब सुना है ! रक्तपात की आग से मेरा हृदय जल रहा है ! जिन्हें तुमने अभी नीच कहा है, वे वसुन्धरा के लिए भगवान् के आशीर्वाद हैं—वरदान ! राजस्थान का अपमान कर तुमने मेवाड़ पर देवताओं के

(विक्रम आगे बढ़ते हैं)

कर्मवती—ठहरो ! राजमाता तुम धन्य हो ! तुमने महाराणा संग्रामसिंह की पत्नी के योग्य बात कही है ! धन्य हो विक्रम ! तुमने अपने पिता राणा संग्रामसिंह जी के समान ही त्याग का परिचय दिया है ! वे भी एक रोज अपने चरणों से राज-मुकुट को ठुकरा कर चले गए थे। भीलों की भेड़ें चरा कर उन्होंने जीवन-निर्वाह किया था ! किंतु, उदयसिंह भी तो उन्हीं सांगा जी का पुत्र है ! यदि वह गृह-कलह की आग प्रज्वलित करने वाला सिद्ध हुआ, तो मैं उसका गला घोंट दूँगी ! वह अभी बच्चा है, जीजी, उसे खेलने को तलवार चाहिए, राज-मुकुट नहीं !

बाघसिंह—किंतु, प्रजा इस सिंहासन का उत्तराधिकारी तो, उदयसिंह को ......

कर्मवती—भूलते हो, बाघसिंह जी ! इस राज-मुकुट को मस्तक पर रखने का अधिकारी वही है, जिसके बाहुओं में वैरी से लड़ने का बल है । जब तक हम अपने व्यक्तित्व को, सुख-दुःख और मानापमान को, देश के मानापमान में निमग्न न कर देंगे, तब तक उसके गौरव की रक्षा असम्भव है ! तब तक हम मनुष्य कहलाने योग्य नहीं हो सकते ! जिस समय देश पर विपत्ति के बादल घिर हुए हैं, बिजली कड़क रही है, शत्रु पैशाचिक अट्टहास कर रहे हैं, उस समय पृथक्-पृथक् व्यक्तियों, नियों और वर्गों के मानापमान और अधिकारों की चर्चा

कैसी ! यह घोर पाप है बाघसिंह जी ! इस समय वीरों को केवल एक अधिकार याद रखना चाहिए, और वह है देश पर जान न्योछावर करना ! शेष सभी पर परदा डाल दो, शेष सभी को पाताल में गाड़ दो !

भीलराज—धन्य हो, महाराज संग्रामसिंह की वीरपत्नी, तुम धन्य हो ! तुम्हें देख कर संसार यह जान सकता है कि मेवाड़ क्यों अजेय है ?

कर्मवती—और सुनो विक्रमजी ! तुम भी याद रखो ! वीरवर महाराणा कुम्भा ने मालवा और गुजरात के बादशाहों पर विजय पाने की स्मृति में गौरीशंकर की चोटी के समान ऊँचा यह जो विजय-स्तम्भ खड़ा किया है, उसकी एक ईंट भी तुम्हारे जीते जी नीचे न खिसकने पावे ! और यह राज-मुकुट राजर्षियों, त्यागियों और बलिदान-पथ के यात्रियों के लिए है, स्थिति-पालक और अकर्मण्य विलासियों के लिए नहीं, लाओ मुझे दो यह !

(मुकुट लेकर विक्रम को पहना देती हैं)

विक्रम—(घुटने टेक कर) मैं पापी हूँ, नराधम हूँ। महाराणा संग्रामसिंह आकाश के उज्ज्वल नक्षत्र थे। आप में उन्हीं की आत्मा का तेज है ! आज आपने मेरे हृदय के अन्धकार को परास्त करके भगा दिया है ! अपनी चरण-रज दीजिए, उससे मुझे बल मिलेगा। आपके पुण्यप्रताप से आपके इस कपूत विक्रम में नई प्राण-प्रतिष्ठा होगी।

(कर्मवती के चरण छूता है)

कर्मवती—यशस्वी हो, बेटा, मेवाड़ की सम्मान-रक्षा के लिए सर्वस्व अर्पण करने की शक्ति संचित करो।

विक्रम—(जवाहरबाई से) माँ, तुम भी मुझे आशीर्वाद दो! मुझे शक्ति दो कि मैं अपने आलस्य और कायरता पर विजय पा सकूँ। भगवान् शंकर! भवानी काली! मुझे साहस दो, तेज दो, मैं मेवाड़ की रक्त-ध्वजा को सँभाल सकूँ!

कर्मवती—मेवाड़ के महाराणा की जय!

सब—मेवाड़ के महाराणा की जय!

जवाहर—चलो वत्स! इस प्रमोद-भवन पर ताला डाल कर वीर-मन्दिर के पुजारी बनो! (सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

स्थान—मेवाड़ के वन की एक पगडंडी

समय—प्रभात

[श्यामा खड़ी गा रही है]

प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है,
प्रेम उन्हीं का जीवन-धन है,
जिनको सुख से चिर-अनबन है!
उन पगलों का पागलपन है,
जिनसे सारा विश्व विमुख है!
प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है!

ऊपर अंतहीन अंबर है,
नीचे तीर-रहित सागर है,
बे-पतवार तरी जर्जर है,
जिसकी ओर पवन का रुख है,
प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है !
प्राणों में होलिका-दहन है,
आँखों में सावन मनभावन है,
यह कैसा अद्भुत जीवन है ?
जिसमें रोने में ही सुख है !
प्रेम-पंथ पर दुख ही दुख है !

श्यामा—ऐसा ही लाल-लाल खूनी प्रभात वह था, जिसमें मेरे जीवन का सूर्य सदा के लिए अस्त हो गया ! देश-भक्ति के अंध उन्माद ने, न्याय के निष्ठुर अभिमान ने एक दिल की हरी-भरी बस्ती को जलता हुआ मरु-प्रदेश बना दिया। इच्छा होती है, चोट खाई हुई नागिन की भाँति फुफकार कर संपूर्ण मेवाड़ को डस लूँ।

(कुछ दूर से गाने की आवाज़ आती है, जो प्रति-क्षण निकटतर होती जा रही है)

धन्य-धन्य मेवाड़ महान !
हिमगिरि-सा उन्नत यह मस्तक अखिल विश्व का है अभिमान !
सदियों से चढ़ते आए हैं, तुझ पर लक्ष-लक्ष बलिदान !
लोहू की लहरों में चलता तेरे गौरव का जल-यान !
बाप्पा रावल, समरसिंह जी, भीमसिंह, चूड़ा, बलवान !

श्यामा—क्या करोगी मेरा परिचय पूछ कर? मेरा भूत विस्मृति की धूल में दब कर खो गया है, मेरा वर्तमान और भविष्य स्वगत-भाषण की भाँति मौन है! मत पूछो चारणी, मैं कौन हूँ!

चारणी—बताओ, बहन! बताओ!

श्यामा—सुनो! मैं हूँ, डाल से तोड़ी हुई, पैरों से रौंदी हुई कलिका! मैं हूँ मूर्छित हाहाकार! मैं हूँ, ऊपर से बंद किंतु भीतर चिर-प्रज्ज्वलित ज्वालामुखी! मेरा जीवन है सूखी हुई सरिता, उजड़ा हुआ उपवन, ऊसर खेत, पतझड़ का पेड़! मेरे जीवन में भी एक दिन वसंत आया था, किंतु मेवाड़ के राजवंश·········

चारणी—मेवाड़ के राजवंश से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है?

श्यामा—वही जो चंद्रमा का कलंक से, आत्मा का पाप से! एक दिन उन्होंने मुझे प्यार किया था, समुद्र की तरह उमड़ कर मुझे अपनी लहरों में लीन किया था। किंतु, दूसरे ही क्षण मैं सूने बालू के तट पर पड़ी कराह रही थी!

चारणी—अधिक पहेली न बुझाओ, बहन! साफ़······

श्यामा—चुप रहो, चारणी! (कुछ रुक कर) अच्छा सुनो! मेरा भी विवाह हुआ था। ऐसा विचित्र, जैसा किसी का न हुआ होगा!

चारणी—कैसा विचित्र?

श्यामा—एक ही रात में मेरा विवाह हो गया, सुहागरात भी हो गई, और सुहाग लुट भी गया! जानती हो क्यों? मेवाड़ के महाराणा की एक सनक के कारण!

अधिकारी, आशा, विश्वास और सांत्वना थे। मेवाड़ की खातिर अपने हाथ से उन्होंने अपनी आत्मा के प्रकाश को फाँसी दे दी! क्या उनके पितृ-हृदय को इससे कुछ भी कष्ट न हुआ होगा। क्या कुमार की ममता पर केवल तुम्हारा ही अधिकार था! बात यह थी, कि वे संयम करना जानते थे, हृदय को कुचल कर रखना जानते थे। उन्होंने कर्तव्य-पथ पर प्रेम का उत्सर्ग करना सीखा था। तुम्हीं सोचो बहन, रण-निमंत्रण पर किसी सैनिक का एक क्षण का भी विलंब मेवाड़ की कीर्ति के अनुकूल हो सकता है! उस मेवाड़ को, जिसकी क्षत्राणियाँ अपने हाथ से अपने पतियों को देश की आन पर कुर्बान होने को सजा कर भेज देती हैं! हमारा देश पुत्र, पिता, भाई, प्रियतम, प्रियतमा, प्राण, सभी से बढ़ कर है! इस तथ्य को समझो!

(हाथ में नंगी तलवार लिये विजय का प्रवेश)

चारणी—देश सर्व प्रथम है, सर्वोपरि है! यह कौन है!

श्यामा—उसी सुहाग-रात की शीतल आग, उस प्रथम और अंतिम सुख-स्वप्न का स्मृति-चिह्न!

चारणी—मैं आशीर्वाद देती हूँ, बेटा! तुम मेवाड़-वंश की कीर्ति बढ़ाओ! बाप्पा रावल के पवित्र रक्त के महत्त्व की रक्षा करो! स्वदेश पर सर्वस्व बलिदान करके हँसना सीखो!

श्यामा—देवि! आज तुम्हारे तेजस्वी शब्दों ने मुझे मोह-निद्रा से जगा दिया। तुम सच कहती हो, देश सर्वोपरि है, सर्व-श्रेष्ठ है। हमारे दुखों की क्षुद्र सरिताएँ उसके कष्ट और संकट

सिराज—समझता हूँ, वॉट्सन साहब, जानता हूँ, फ़ोर्ट का इन-
तज़ाम करने के लिए, खून बहाने की हम को ज़रूरत नहीं! यह
तो मैं भी जानता, ज़मीन और ज़ायदाद सभी को अपना सौंप
दिया जा चुका है। [illegible] साहब! हम तो सब कुछ
जानते हैं, जो इसके इलाके में बैठ कर, हम से दुश्मनों की [illegible]
कर [illegible] है।

वॉट्सन—आप ठीक कहते हैं, नवाब! हम यह नहीं
चाहते कि हमें कोई भी सताये और हम भी सतायें, हम तो यह
चाहते हैं कि हमें सतायें, और हम ही ज़ुल्म सहें तो! जब
तक हम हाथ पर बैठ कर नहीं रहेंगे, और दुश्मनों को देश
निकाला नहीं देंगे, तब तक हमें अमन का मज़ा ही नहीं
आयगा!

सिराज—अंग्रेज़ों का ठीक अंदाज़ा है! अपने भाई
साहब को हुकूमत की ख़्वाहिश से भी ग़ैर नहीं, उन्हें
अपने ख़ून की प्यास है! भाई को भाई के ख़ून का प्यासा
देख कर भी चाहता है कि यह सूरत फ़ौरन ख़त्म हो जाय।

(एक सन्तरी आता है, और नवाब को अभिवादन करता है)

सिराज—क्या है?

सन्तरी—सुल्तान के बादशाह का दूत आया है।

सिराज—सुल्तान के बादशाह का दूत! अच्छा, भेज दो यहीं!

(सन्तरी का प्रस्थान)

वॉट्सन—लीजिए, अब चला मैं फिर [illegible]!

विक्रम—कैसा पैग़ाम !

चाँदख़ाँ—मौत का पैग़ाम।

(दूत का प्रवेश)

विक्रम—कहो क्या, है ?

दूत—(पत्र देकर) बादशाह सल्तनत ने यह फ़र्मान भेजा है !

विक्रम—देखें, क्या लिखा है ? पढ़िए, चाँदख़ाँ जी आप ही पढ़िए !

(पत्र चाँदख़ाँ को देते हैं)

चाँदख़ाँ—(पत्र पढ़ता है)

"महाराणा साहब !

आदाब ! आपने गुजरात के एक बागी को पनाह दी है, यह बाहमी दोस्ताना ताल्लुक़ात के लिए नुक़्सानदेह है। आप उसे मेरे सुपुर्द कर दें, वरना, मुझे मजबूरन मेवाड़ पर चढ़ाई करनी पड़ेगी।

आपका

बहादुरशाह"

(महाराणा की त्योरियाँ चढ़ जाती हैं, वे विचार में पड़ जाते हैं)

चाँदख़ाँ—(क्रोध पीकर) हूँ···, मैं बागी हूँ ! महाराणा ! आप क्यों फ़िक्र करते हैं ! मेरे सबब से कोई आफ़त मोल न लीजिए। मुझे जाने दीजिए !

विक्रम—कहाँ ! मरने के लिए ! ऐसा नहीं हो सकता ! मेवाड़ में आज तक ऐसा नहीं हुआ ! सूर्य पश्चिम से भले ही निकले, पर मेवाड़ अपनी आन नहीं छोड़ सकता !

ऊँचे हैं! पर क्या सब राजपूत इसे पसंद करेंगे! एक मुसल्मान के पीछे हजारों हिंदुओं का खून!

विक्रम—आप भी मुसल्मान हैं और बहादुरशाह भी! फिर एक मुसल्मान दूसरे मुसल्मान का गला क्यों काटना चाहता है! वास्तविक अर्थों में धर्म से धर्म की लड़ाई किसी भी युग में नहीं हुई। हमेशा एक स्वार्थ से दूसरा स्वार्थ लड़ा है! मैं और आप जब दोस्त बन कर रह सकते हैं, तो क्या सबब है कि मेरे और आपके धर्म यहाँ भाई-भाई की तरह गले में हाथ डाल कर न रह सकें!

चाँदखाँ—लेकिन, अपना मजहब फैलाने की ख्वाहिश...।

विक्रम—सफेद झूठ! मजहब मनुष्य के हृदय के प्रकाश का नाम है। जो मजहब का नाम लेकर तलवार चलाते हैं, वे दुनियाँ को धोखा देते हैं, धर्म का अपमान करते हैं। सच्चा वीर वही है, खरा राजपूत वही है, जो न हिंदुओं के अन्याय का हिमायती है और न मुसल्मानों के! वह न्याय का साथी है और आजादी का दीवाना है। उसे अत्याचारी हिंदू से ईमानदार मुसल्मान प्यारा है! वह अत्याचारी मुसल्मान का जितना दुश्मन है, बेईमान और विश्वासघाती हिंदू का उससे कहीं अधिक शत्रु!

चाँदखाँ—आप कुछ नई बात कह रहे हैं!

विक्रम—नई बात! बिलकुल नहीं! इतिहास के कुछ ही वर्ष पहले के पृष्ठ पलट देखिए! महाराणा संग्रामसिंह जी ने

बदला नहीं चुका सकते थे ' इतिहास कह रहा है, उस लड़ाई को जीतने का श्रेय कुंभाजी की अपेक्षा महमूदशाह को ही अधिक था। कैसी उदारता थी उस मुसलमान में। वास्तव में मनुष्यता या पशुता पर किसी धर्म या जाति का एकाधिकार नहीं है। कुछ आदमियों के गुण-दोषों को पूरी कौम के मत्थे मढ़ना एक ऐसी गलती है जिसे लोग गलती ही नहीं समझते और इसीलिए उसे सुधार नहीं सकते। अच्छा, ख़ैर अब चलिए! आगे की लड़ाई के लिए बैठ कर सलाह करनी है। अत्याचारियों को चुनौती का जवाब देने में मेवाड़ कभी पीछे नहीं रहा! आज भी वह अतिथि-रक्षा के महान् कर्तव्य के साथ-साथ रण-धर्म का पालन करेगा।

(दोनों का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

चौथा दृश्य

स्थान—माँडू का राज-महल।

[बहादुरशाह और मुल्लूख़ाँ बातचीत कर रहे हैं]

मुल्लूख़ाँ—बादशाह सलामत! मेरा तो यही ख़याल है कि राणा विक्रमादित्य, चाँदख़ाँजी को आपके सुपुर्द न करेंगे!

बहादुरशाह—न करें, यही तो मैं भी चाहता हूँ! इस वक्त मेवाड़ में अमन की कमी है। मेवाड़ियों की फ़ौजी तैयारी न के बराबर है। मैं तो इसी वक्त लड़ाई छेड़ देना चाहता हूँ!

अब्बाजान की राणा साँगा के हाथों गिरफ्तारी बेइज्जती का यह दाग है, जो हमारे खानदान के दिल पर क़यामत तक रहेगा। मेरे कलेजे में बदला लेने की आग हर साँस के साथ धधक उठती है! मुझे आगा-पीछा कुछ नहीं सूझता बदला! सिर्फ़! बदला! अब्बाजान की बेइज़्ज़ती का मेवाड़ियों की बेइज़्ज़ती से बदला! (कुछ रुककर) मुन्दर्खाँ!

मुन्दर्खाँ—जी जनाब!

बहादुर—पोर्चगीज गवर्नर 'नुनो दे कुन्हा' अभी आए नहीं!

मुन्दर्खाँ—आते ही होंगे! (कुछ ठहर कर) गुस्ताखी माफ़ हो, तो एक बात कहूँ!

बहादुर—कहो!

मुन्दर्खाँ—मैं इस फ़िरंगी को नहीं चाहता।

बहादुर—क्यों सूबेदार!

मुन्दर्खाँ—जिस शख़्स के हाथ में तलवार हो, उससे दोस्ती करने में खतरा नहीं, लेकिन जिसके हाथ में तराजू भी हो और तलवार भी उससे दोस्ती करना अपने गले में फाँसी लगाना है।

बहादुर—क्यों।

मुन्दर्खाँ—क्योंकि, तलवार जब हमारे सर पर तनती है तो सब दिखाई देती है, लेकिन तराजू जब हमारा सब कुछ [illegible] के तराजू में [illegible] ले जाती है, कुछ पता ही नहीं चलता!

बहादुर—हे [illegible]! जिन फिरंगियों ने गुजरात के सूरत, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] और मुहम्मदाबाद को जलाकर

खाक किया और चार हजार आदमियों को गुलाम बना कर विलायत भेजा, वे आज मेरी मदद को क्यों आए हैं ! इसमें जरूर कुछ राज है !

मुल्दखाँ—राज यही है कि वे हिंदुस्तान की बादशाहत चाहते हैं। इधर आप को राजपूतों से लड़ाकर कमजोर कर देंगे, उधर दिल्ली का तख्त डाँवाँडोल है ही, फिर उन्हें अपना उल्लू सीधा करने में देर न लगेगी।

बहादुर—हूँ……। लेकिन नहीं, मेवाड़ से बदला तो लिया ही जायगा। जानते हो सूबेदार मैं भी दिल्ली का बादशाह बन सकता हूँ। मगर जब तक मेवाड़ की शान चट्टान की तरह सर उठाए खड़ी है, तब तक मुझे चैन नहीं मिल सकती। इसे धूल में मिलाना ही होगा। यूरोपियन तोपखाने की मदद से चित्तौड़ का क़िला फ़तह किया जा सकता है, इसीलिए इस पोर्चगीज को साथ लेना पड़ा है। यह लो वह आ ही गया।

(नुनो दे कुन्हा का प्रवेश)

बहादुर—आइए गवर्नर साहब, बैठिए ! आपका तोपखाना तैयार है !

नुनो—जी हाँ, इस बार पोर्चगीज के लड़ने का तरीका भी आप देखें ! राजपूतों को कबाब की तरह भून कर न रख दिया जाय, तो कोई बात नहीं ! लेकिन, बादशाह साहब, इस फ़तह के इनाम के तौर पर हमें डयू पर क़िला बनाने की इजाजत मिलनी चाहिए।

होगी, जब मेवाड़ को धूल में मिलाया जायगा ! यही होगा, अब्बाजान ! यही होगा !

(शाहदौला औलिया का प्रवेश)

बहादुर—कौन, उस्ताद !

शाह—बेटा, यह सब क्या हो रहा है ?

बहादुर—बदला, शाह साहब !

शाह—भूलता है बहादुर ! हिंदुस्तान में रहने वाले मुसलमान भी हिंदू हैं ! क्यों अपने भाइयों का खून बहाना चाहता है । जिस शाख पर बैठा है, उसी को काटने पर क्यों आमादा है !

बहादुर—लेकिन······अब्बाजान की तौहीन का बदला··

शाह—किससे ! राणा साँगा तो गए ! मेवाड़ की गरीब रियाया का क्या कसूर है ! खुदा की इस बेगुनाह खल्कत ने क्या बिगाड़ा है ! यह भी परवरदिगार-अल्ला-ताला की लाड़ली औलाद है ! तू इसे तंग करेगा तो खुदा तुझ पर कहर की बिजली गिराएगा । और फिर महज बदले की गरज से तो तू यह तूफान नहीं उठा रहा है । अपने दिल से पूछ । क्या उसमें सल्तनत बढ़ाने का लालच नहीं है ! भाई के खून से बुझनेवाली शाही प्यास नहीं है ?

बहादुर—क़िबला ! चाँदखाँ बागी है और बागी को कुचलना अमन और इन्तज़ाम की पहली सीढ़ी है, इससे आप भी इनकार न करेंगे । और ये राजपूत ! ये इस ज़माने में हमारे रास्ते के सब से बड़े रोड़े हैं । क्या हर एक महत्वाकांक्षी को अपना रास्ता साफ़ नहीं करना चाहिए !

शाह—अहसान फरामोश बहादुर! भूल गया कि तूने दक्षिण की जन्नत ग्वालियर के राजपूत राजा, और राणा साँगा के भतीजे [illegible] की ही मदद से हासिल की थी। अपने मेहरबानों और मददगारों की कौम से लड़ाई मोल लेना जिन्दगी के [illegible] और [illegible] पर कुल्हाड़ी मारना है। राजपूत दया-शील होते हैं, उनकी दुश्मनी लड़ाई के मैदान तक ही रहती है, फिर वे बाप का बदला बेटे से नहीं लेते। राजपूत किसी कौम के दुश्मन नहीं, वे तो बेइन्साफी के दुश्मन और इन्साफ के साथी हैं। अगर तू आदमी होगा तो उनसे दोस्ती करेगा। इस बहादुर कौम को अगर तू दुश्मन बनाएगा तो तेरी सल्तनत भी धूल में मिल जाएगी। बहादुर! अब भी होश में आ! [illegible] कर कदम हटा। (प्रस्थान)

बहादुर—सच कहते हो, शाह साहब! राजपूत किसी के दुश्मन नहीं! इस बहादुर कौम को दुश्मन न बना!! अक़्ल, अक़्ल! क्या आजादी की यही राह है। (एक बार आकाश की ओर देखकर ठंडी साँस लेता है) नहीं! तो कोई बात नहीं। चित्तौड़ से बदला लिया ही जाएगा, चाहे सल्तनत चली जाए! [illegible] की इज्जत सल्तनत से भी बड़ी है। ([illegible] टहलता है) हैं, कहाँ डूब रहा हूँ—[illegible] का [illegible] में बहादुर नहीं [illegible] है! नहीं, मैं इस अपमान का बदला लूँगा। (प्रस्थान)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—महाराणा विक्रमादित्य का राज-भवन ।

[दरबार भरा हुआ है ! बीच में सिंहासन पर महाराणा विक्रमादित्य बैठे हुए हैं । उनके दोनों ओर जालौर के सोनिगराराव, आबू के देवड़ाराव, प्रतापगढ़ के बाघसिंह, बूँदी के राजकुमार अर्जुनसिंह, मेवाड़ के सेनापति, मीरराज, तथा अन्य सामंत बैठे हुए हैं ।]

विक्रम—मेवाड़ के वीरो ! आज आपको किसलिए कष्ट दिया गया है, यह तो आप जानते ही हैं । जन्मभूमि पर संकट की घटाएँ छा रही हैं, गुजरात की सेना मेवाड़ पर आक्रमण करने चढ़ पड़ी है !

एक सामंत—सब जानते हैं, महाराणा ! पर वर्तमान परिस्थितियों में किया ही क्या जा सकता है !

दूसरा सामंत—मेवाड़ियों को निरन्तर लड़ते-लड़ते छः शताब्दियाँ हो गईं । कुछ और विश्राम तो किसी ने जाना ही नहीं । आखिर, यह अस्वाभाविक स्थिति कब तक टिक सकती है ?

सेनापति—हमारी सेना भी बहुत थोड़ी है ।

पहला सामंत—बहादुरशाह के साथ गुजरात और मालवा की संपूर्ण सेना तो है ही, पोर्चुगीजों का यूरोपियन तोपखाना भी है ! तोपों से लड़ने को हम तलवारों से हो ही कैसे सकते हैं ! धर्म-युद्ध तो अब दुनियाँ में रहा ही नहीं !

विक्रम—आपकी क्या राय है, सोनिगराराव जी !

सोनिगराराव—हमारी राय की भी आपको जरूरत हुई, भला ऐसा दिन तो आया!

निकुम—भीलराज! आप क्या कहते हैं?

भीलराज—मैं ठहरा नीच भील; मैं राज-काज के मामलों में क्या राय दे सकता हूँ?

(कर्मवती और चारणी का प्रवेश, सब खड़े हो जाते हैं)

कर्मवती—भीलराज!

भीलराज—माँ!

कर्मवती—पुरानी बातें अभी तक नहीं भूले? जब सारे देश पर संकट पड़ा हो, तब अपने व्यक्तिगत अपमानों की ओर ध्यान देना, भीलराज ने कब से सीखा?

भीलराज—अपमान का बाण तो प्राणों के साथ……

कर्मवती—किन्तु, देश का अपमान क्या तुम्हारा अपमान नहीं है? जब देश पराधीन होगा, तब क्या तुम और तुम्हारा कुटुम्ब गुलामी की जंजीरों से मुक्त रह सकेगा? जिस मेवाड़ की चप्पा-चप्पा भूमि तुम्हारे पुरखाओं के खून से सिंची हुई है, उसे बिना विरोध शत्रु को सौंप दोगे? बोलो!

भीलराज—यह कैसे हो सकता है, देवि!

पहला सामंत—किन्तु, हम में इतनी शक्ति कहाँ है?

सेनापति—हमारे पास उतनी सेना ही कहाँ है!

कर्मवती—[illegible] छोड़ कर निकलेगी सेना! आक्रमण में दबकेगी सेना! मेवाड़ के वीरों को प्राणों का मोह! आज

मैं यह क्या देख रही हूँ ! स्वामी ! आज तुम क्या सोचते होगे ! जिस मेवाड़ का मस्तक तुमने अपने प्राणों की बलि देकर ऊँचा किया था, वह आज अपनी मर्जी से शत्रु के चरणों में झुक रहा है ! और यह सब हो रहा है तुम्हारी पत्नी के जीते जी !

सोनिगराराव—नीति कहती है कि इस समय संधि कर लेने में समझदारी है।

कर्मवती—छिः ! ऐसा कहना मेवाड़ के दिवंगत बलि-पंथियों की अन्तिम रक्त-बूँदों का अपमान करना है। कभी किसी ने सुना कि मेवाड़ ने किसी के आगे झुक कर संधि की प्रार्थना की थी ! तुम्हीं ने क्यों आज मेवाड़ का गौरव मिट्टी में मिलाने का निश्चय कर लिया है ! संधि ! यह शब्द मुँह से निकालते हुए तुम्हें लज्जा न आई सोनिगराराव जी ! क्या इसीलिए इतनी लंबी तलवार बाँधी है तुमने ! लड़ते-लड़ते मर जाना, या विजय प्राप्त करना, राजपूत तो यही दो बातें जानते हैं ! यह 'संधि' शब्द आपने किससे सीख लिया ! यदि प्राणों का इतना मोह है तो चूड़ियाँ पहन कर घर बैठो, लाओ यह तलवार मुझे दो !

सोनिगराराव—मेरा आशय यह नहीं······हमें आप इतना हतवीर्य न समझिए।

वाघसिंह—हम राजपूत आन पर मर-मिटना अभी भूले नहीं हैं !

कर्मवती—मैं यह जानती हूँ, वीरो, तभी तो कहती हूँ !

(चारणी गाती है)

जय-जय-जय मेवाड़ महान !

तेरे कण-कण में जीवन है,
मूर्तिमान तू नवयौवन है,
प्रलयभरी तेरी चितवन है,
तू आँधी है, तू तूफ़ान !
जय-जय-जय मेवाड़ महान !

तेरी उज्ज्वल रक्त-निशानी,
वज्रघोष है तेरी वाणी,
तेरी तलवारों का पानी
दृप्त कर रहा रण के प्राण !
जय-जय-जय मेवाड़ महान !

तेरी गौरवमयी कहानी,
प्राणों में भर रही जवानी,
बलि-पथ पर बनकर दीवानी,
जाती है तेरी संतान !
जय-जय-जय मेवाड़ महान !

(चारणी का गाते हुए, और उसके पीछे-पीछे सब का दोहराते हुए प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

जन्मभूमि हो रही अनाथ,
वे ही आज बढ़ावें हाथ,
जिन्हें न प्यारा हो निज माथ,
माँ का ऋण चुक जाय सव्याज !
प्रेम-पर्व आ पहुँचा आज !

(सहने टीका करके भाइयों को राखी पहनाती, और तलवारें देती हैं)

कर्मवती—मेवाड़ में ऐसी रंगीन श्रावणी कभी न आई होगी ! भाइयो, क्षत्राणियों की राखियाँ सस्ती नहीं होतीं। ब्राह्मणों की तरह हम पैसे लेकर राखी नहीं बाँधतीं ! हमारे तारों का प्रतिदान सर्वस्व-बलिदान है। जिन्हें प्राण चढ़ाने का शौक हो, वे ही ये राखियाँ स्वीकार करें।

एक क्षत्रिय—मेवाड़ के क्षत्रियों को यह बात नए सिरे से न समझानी होगी। माँ, हम लोग सदियों से हँसते-हँसते प्राण देते आए हैं। हमारी इस अक्षत-शक्ति का स्रोत और कहाँ है ! बहनों की राखियों के ये धागे ही तो हमें बल देते आए हैं।

अर्जुनसिंह—बहन, तुम्हारे भाई के लिए यह राखी ही जीवन का ध्रुव तारा है ! आज यह मरण की ओर इशारा कर रही है, तो क्या हम इसका आदेश अमान्य कर सकते हैं ! केवल नक्शे की लकीरें देख कर ही तो देश पर प्राण नहीं दिए जा सकते, तुम्हीं ने तो राखी के धागों द्वारा इन लकीरों का महत्त्व समझाया है। जिस प्रकार इन धागों में असीम स्नेह, ममत्व, वेदना और

कर्नवती—बड़ा कठिन प्रसंग है। इस समय मेरे स्वामी नहीं हैं। उनके रहते मेवाड़ की ओर आँख उठाने का किसमें साहस था! उनके आतंक से मेवाड़ के बाहर भी दूर-दूर तक अत्याचारियों के प्राण काँपा करते थे। मेवाड़ की सीमा में पैर रखने का तो साहस ही किसे हो सकता था! बाघसिंह जी, हमने आपस के वैमनस्य की आग में अपने ही हाथों अपना सर्वस्व स्वाहा कर दिया!

बाघसिंह—अब पश्चात्ताप करने से क्या होता है, देवि! अब तो हमें मार्ग बताइए। ऐसे प्रसंगों पर विवेक अनुशासन के चरणों पर झुक जाना चाहता है।

कर्नवती—मुझे एक उपाय सूझा है।

बाघसिंह—क्या?

कर्नवती—मैं हुमायूँ को राखी भेजूँगी।

जवाहरबाई—हुमायूँ को! एक मुसलमान को भाई बनाओगी?

कर्नवती—चौंकती क्यों हो, जवाहरबाई! मुसलमान भी इनसान हैं। उनके भी बहनें होती हैं। सोचो तो बहन, क्या वे मनुष्य नहीं हैं? क्या उनके हृदय नहीं है? वे ईश्वर को खुदा कहते हैं, मन्दिर में न जाकर मस्जिद में जाते हैं, क्या इसीलिए हमें उनसे घृणा करनी चाहिए?

बाघसिंह—किन्तु, और भी तो बाधाएँ हैं। क्या हुमायूँ पुराना वैर भुला सकेगा? सीकरी के युद्ध के जख्मों के निशान क्या आसानी से मिट सकेंगे?

कर्णवती—अच्छा तो फिर यही हो। कानून और मनुष्यत्व पर विश्वास करके हुमायूँ की परीक्षा की जाय। लो, यह राखी और यह पत्र आज ही दूत के हाथ बादशाह हुमायूँ के पास भेजिए।

(राखी और पत्र देती है)

जवाहर—अच्छी बात है। हम भी देखेंगी कि कौन कितने पानी में है। इस बहाने एक मुसलमान की मनुष्यता की परीक्षा हो जायगी और यह भी प्रकट हो जायगा कि एक राजपूतनी की राखी में कितनी ताकत है!

[पटाक्षेप]

दूसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—धनदास का भवन

[धनदास बाहर से हाथ में मोहरों से भरी हुई थैली लिए हुए आता है]

धनदास—(थैली की ओर सतृष्ण दृष्टि से देखते हुए)

पितु-मातु, सहायक, स्वामि, सखा, तुमही धनदेव ! हमारे हो।

(दूसरी ओर से धनदास के पुत्र मौजीराम का संस्कृत-श्लोक पढ़ते हुए प्रवेश)

मौजीराम—पिबंति नद्यः स्वयमेव नोदकं
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः,
धाराधरो वर्षति नात्महेतवे
परोपकाराय सतां विभूतयः।

धनदास—अरे-अरे ! इष्ट देव की स्तुति में विघ्न डाल दिया ! यह क्या अगड़म-बगड़म बक रहा है !

मौजीराम—मैं कह रहा था, "पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नोदकम्…

धनदास—अरे स्वर्गलोक की बात न छोड़। । बता, अर्थ !

मौजी—बस अर्थ ! केवल अर्थ ! आप तो सब जगह अर्थ-लाभ चाहते हैं ! सुनिए, पिताजी, मैं कह रहा था, नदियाँ अपना जल स्वयं नहीं पिया करतीं, वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते, बादल अपने लिए वर्षा नहीं करते, इसी प्रकार सत्पुरुषों का सम्पत्ति-ऐश्वर्य भी सर्वदा दूसरों के उपकार के लिए ही हुआ करता है।

धनदास—हाय ! हाय ! 'बूड़ा वंश कबीर का उपजे पूत कमाल !' तू मेरी और मेरे वंश की लुटिया जरूर डुबाएगा !

मौजी—वाह, पिताजी ! मैं तो आपकी स्तुति कर रहा था। आप के समान सज्जन.......

धन०—मैं और सज्जन ! हा ! हा ! हा ! अरे मौजी, इस सज्जनता की हवा लगते ही, तिजोरियों का सारा धन हवा हो जाता है। सज्जनता तो मुझसे ऐसी दूर रहती है, जैसे"'जैसे"' बस यहीं तो मेरा दिमाग काम नहीं देता। उपमा देना तो मुझे आता ही नहीं !

मौजी—जैसे गधे के सर से सींग.......

धन०—क्यों रे, मेरा अपमान करता है !

मौजी—हः-हः-हः ! आपका अपमान ! उस रोज जब आप राज-भवन से पाद-प्रहार का आनंद लूट कर आए थे, तब आप ही ने तो हँस कर कहा था—'व्यापारी का अपमान होता ही नहीं'!

धन०—मेरी शिक्षा मुझी पर लागू करेगा !

माया—कैसा आनन्द !

धनदास—अरी, कुछ मत पूछ ! बस मेरे पौ बारह हैं !

माया—क्यों, फिर कोई प्रपंच रचा है क्या ?

धन—मैंने नहीं, विधाता ने। भाग्यवश बहादुरशाह ने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी है। बड़े आनन्द का दिन है !

माया—डूब मरो चुल्लू भर पानी में ! मेवाड़ पर संकट आया है, और तुम मौज मना रहे हो, तुम्हें आनन्द आ रहा है !

धन०—तुम क्या जानो; जिस दिन लड़ाई छिड़ती है, व्यापारियों के घर में घी के चिराग जलते हैं—घी के ! अहा-हा ! कैसी बड़ी बड़ी आँखों से घूरने लगी—जैसे दो हीरे चमक रहे हों !

माया—शर्म की बात है ! लड़ाई छिड़ने में तुम्हें लाभ नज़र आता है ! आखिर तुम्हें नर-रक्त की उस भयंकर बाढ़ से क्या हाथ आएगा ?

धन०—तुम नहीं जानतीं; मैंने बहादुरशाह को रसद पहुँचाने का ठेका ले लिया है। एक-एक के दस-दस होंगे, देखो !

माया—धिक्कार है तुम्हें ! देश के साथ विश्वासघात ! तुम ऐसा पाप······

धन०—मैं ऐसा पाप न करता तो यह चटक-मटक······

माया—भाड़ में जाय यह चटक-मटक ! (ज़ेवर उतार-उतार कर फेंकती है)

धन०—ठहरो भवानी, मेरी दुर्गे, मेरी काली !

मेरे सर्वस्व ! तुम राक्षस नहीं, देवता बनो, ताकि मैं अपनी श्रद्धा के फूल तुम पर चढ़ा सकूँ। बोलो प्राणेश्वर बोलो ! तुम्हारे दुष्कृत्य पर दसों दिशाएँ हँस रही है। इस हँसी का तुम्हारे पास क्या उत्तर है ? जन्मभूमि, इन धातुओं के थोड़े से टुकड़ों से तुच्छ नहीं है ! तुम्हारे हृदय में क्या इतना भी मनुष्यत्व नहीं है ! आज मुझे अपने जीवन-मरण की समस्या सुलझानी है ! कहो नाथ, मुझे अपने पत्नीत्व पर गर्व करने दोगे या नहीं ! जन्मभूमि के कण-कण की गम्भीर घृणा से अपने वंश की रक्षा करोगे या नहीं ? सोचो तो देव, क्या मैं तुम से यह अनुरोध कर के अन्याय कर रही हूँ ?

धन०—नहीं, माया ! तुम सच कहती हो। तुम वास्तव में देवी हो। तुमने आज मेरी आँखें खोल दीं। उफ ! मैं कितनी गलती पर था, कैसा जघन्य पाप करने चला था। तुमने मुझे बचा लिया। ले जाओ, माया, मेरा सम्पूर्ण धन ! जो वीर रण में वीर-गति पावें उनके बाल-बच्चों की सेवा में मेरा सर्वस्व समर्पित कर दो !

माया—धन्य हो, स्वामी ! यही मेरे देवता के अनुकूल हैं। तुमने ससार को बता दिया है कि लोभ नहीं, उदारता ही वैश्यों का स्वाभाविक धर्म है ! आओ, स्वामी आज बड़े आनंद का दिन है ! सचमुच बड़े आनन्द का दिन है !

(दोनों का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

[बिहार में, गंगा के तट पर, हुमायूँ का फ़ौजी डेरा। सामने खास तंबू में हुमायूँ, और उसके सेनापति हिंदूबेग और तातारखाँ बैठे हैं।]

हिंदूबेग—जहाँपनाह, शेरखाँ हार कर, बंगाल की तरफ़ भाग तो गया, पर, वह चोट खाया हुआ काला नाग चुप न बैठ सकेगा।

हुमायूँ—एक बात ज़रूर है। शेरखाँ बड़ा दिलेर और बड़ा बहादुर है। ठीक अल्लाउद्दीन की तरह।

तातारखाँ—कहाँ आसमान का चाँद और कहाँ झोंपड़ी का चिराग! कहाँ बादशाह बाबरशाह, और कहाँ लुटेरा शेरखाँ!

हुमायूँ—नाकामयाब सिपाही, लुटेरा और बाग़ी ही कहलाता है, मगर ज्योंही कामयाबी उसके सर पर ताज पहनाती है, त्योंही वह लुटेरा—वह बाग़ी—बादशाह हो जाता है!

तातारखाँ—शेरखाँ तो आपका दुश्मन है, आप उसकी तारीफ़........

हुमायूँ—दुश्मनी आँखों की रोशनी नहीं छीन लेती! शेरखाँ की बहादुरी, इन लड़ाइयों में साफ़ रोशन हो चुकी है! बेशक उसकी आँखों में बिजली की चमक, भौंहों में कमान का-सा खिंचाव, और चेहरे पर बहादुरी का नूर नज़र आता है! उसकी मज़बूती से बंद मुट्ठियों से मालूम होता है, गोया वह ज़िंदगी और मौत दोनों को मुट्ठी में किए घूमता है! ऐसे दिलेर दुश्मन से लोहा लेना भी फ़ख़्र की बात है।

तूफ़ान उठता है ! भाई भाई से दग़ा करेगा तो यह ज़मीन टूट कर करोड़ों टुकड़ों में बँट जायगी, सूरज बुझ जायगा, ख़ुदा की कुदरत अँधेरे के काले दरिया में डूब कर नेस्तनाबूद हो जायगी !

तातारख़ाँ—जो न होना चाहिए, दुनियाँ में वही ज़्यादा हो रहा है ! भाई की गर्दन पर भाई छुरी चला रहा है, फिर भी ज़मीन और आसमान अपनी जगह पर क़ायम हैं। सूरज उसी तरह निकलता है और चला जाता है। उसी तरह शाम होती है, चाँद चमकता है, हँसता है, मुसकराता है और चला जाता है ! ख़ुदा, गोया सब को गोरखधंधे में बाँध कर सो गया है ! दुनियाँ अपने आप, जैसे जी चाहे चलती रहे ! दुनियाँ की रफ़्तार जिस जगह ठोकर खाती है, उसके पहियों के कील-पुर्ज़े जहाँ-कहाँ से ख़राब हो गए हैं, उनसे जहाँ-कहाँ से बेसुरी आवाज़ आती है, यह गोया वह देखता ही नहीं, उसे गोया इससे कोई सरोकार ही नहीं।

हिंदूदेव—यह दुग्शाह को ही देखिए ! एक भाई को क़ब्र में पहुँचा कर, दूसरे पर तलवार ताने खड़ा है।

तातारख़ाँ—सल्तनत का लालच है ही ऐसी चीज़ ! यह लालच का साँप किसके दिल के दरीचे में कहाँ छिपा बैठा है, यह तब तक जानना मुश्किल है, जब तक वह काट ही नहीं खाता। जो छिपा बैठा होता है, वही एक दिन बेपर्दा होकर, फन ऊँचा करके झपट पड़ता है। इस पर हमें ताज्जुब न करना चाहिए, मगर हम करते हैं।

हिंदूबेग—सल्तनत की हिफाजत और मजबूती के लिए य जरूरी है कि आप अपने भाइयों के हाथ से ताकत छीन लें।

हुमायूँ—यह न कहो तातारखाँ! ये मेरे भाई हैं! भा लफ्ज में कितनी मिठास, कितना अपनापा भरा है। उस कितनी मोहब्बत है, कितना सुख है, कितना आराम है!

हिंदूबेग—जिस फूल को हम कलेजे से लगा कर रखा चाहते हैं, वही किसी दिन काँटे चुभा देता है। जहाँपनाह! आ धोखे में हैं!

हुमायूँ—यह धोखा बहुत प्यारा है! मुझे इस धोखे फूलों की सेज पर सोने दो। उस पर शक के काँटे न बिछाओ ठगना अजाब है, ठगा जाना नहीं!

तातारखाँ—बादशाह की आँखों में मोहब्बत के आँसू म इसाफ की सुर्खी चाहिए! बादशाह सलामत, भाइयों पर विश्वा यत ......

हुमायूँ—यह दुनिया की सल्तनत तो एक न एक दिन छोड़नी ही होगी, तातारखाँ! बहिश्त की सल्तनत के रास्ते में इसे रोड़ा न अटकने दो! जिसे हमने अपना समझा है, वह अपना नहीं है! आखिर, मेरे भाई भी तो बादशाह बाबर के बेटे हैं। अगर वे सल्तनत चाहते हैं तो मुझे इनकार न करना चाहिए। तुम्हें याद है तातारखाँ, तुमने भी देखा था हिंदूबेग, आखिरी वक्त अब्बाजान ने कहा था '...बेटा हुमायूँ, अपने भाइयों पर रहम करना!' अब तक [illegible] रहे हैं।" मेरे अब्बाजान—वे

अब्बाजान जिन्होंने मेरी मौत खुदा से अपने लिए माँग ली, उनका हुक्म मेरे लिए बहिश्त की सल्तनत से बढ़कर है!

(एक पहरेदार का प्रवेश)

पहरेदार—(अभिवादन करके) जहाँपनाह!

हुमायूँ—क्या है!

पहरेदार—ख़िदमत में मेवाड़ से एक दूत आया है!

हुमायूँ—मेवाड़ से! [illegible] यहीं भेज दो!

(पहरेदार का प्रस्थान)

हुमायूँ—मेवाड़ से दूत! मेवाड़ [illegible] में ही कुछ जादू है। बयाना और सीकरी की लड़ाई में मैं भी अब्बाजान के साथ था। राजपूतों से हमारी फ़ौज कैसा खौफ खाती थी! राना साँगा! उन्हें तो खुदा ने फ़ौलाद [illegible]! उनकी तिरछी नजर क़यामत का पैग़ाम थी। मेवाड़ पर [illegible] बहादुरशाह ने चढ़ाई कर रखी है न!

(दूत का प्रवेश)

हुमायूँ—आओ मेवाड़ के [illegible]!

दूत—(अभिवादन करके) [illegible] महाराणा संग्रामसिंह जी की महारानी कर्मवती जी ने [illegible] यह [illegible] भेजी है।

हुमायूँ—(हाथ बढ़ाकर) [illegible] किस्मत! हिंदूबेग! तुम जानते हो मैं मेवाड़ की बहुत इज्जत करता हूँ, और हरएक बहादुर आदमी की [illegible]! यह [illegible] सर पर लगाने की चीज है। यह [illegible] में बहिश्त है!

तातारखाँ—दुश्मन की तारीफ़ करने में, जहाँपनाह से बढ़कर······ ··

हुमायूँ—दुश्मन ! ह ह ह ! दुश्मन ! आँखों पर से तास्सुब का चश्मा हटा कर देखो ! जिन्हें हम दुश्मन समझते हैं, वे सब हमारे भाई हैं ! हम एक ही ख़ुदा के बेटे हैं, तातार ! हाँ देखूँ तो इसमें क्या लिखा है !

(हुमायूँ पत्र पढ़ते-पढ़ते विचार-मग्न हो जाता है)

हिंदूबेग—क्या सपना देखने लगे, जहाँपनाह ! महारानी कर्मवती ने क्या जादू का पिटारा भेजा है !

हुमायूँ—सचमुच हिंदूबेग, उन्होंने जादू का पिटारा भेजा है ! मेरे सूने आसमान में उन्होंने मोहब्बत का चाँद चमकाया है ! उन्होंने मुझे राखी भेजी है, मुझे अपना भाई बनाया है। (दूत से) बहन कर्मवती से कहना, हुमायूँ, तुम्हारी माँ के पेट से पैदा न हुआ तो क्या, वह तुम्हारे सगे भाई से बढ़ कर है। कह देना—मेवाड़ की इज्ज़त, मेरी इज्ज़त है। जाओ !

(दूत का प्रस्थान)

तातारखाँ—आपके अब्बाजान के जानी दुश्मन की औरत ने·········

हिंदूबेग—उसी औरत ने जिसके खाविंद ने क़सम खाई थी कि मुग़लों को हिंदुस्तान के बाहर खदेड़े बग़ैर चित्तौड़ में क़दम न रखूँगा !

हुमायूँ—अफ़सोस, कि तुम इस राखी की क़ीमत नहीं जानते !

छोटे-छोटे दो धागे जानी दुश्मन को भी मोहब्बत की जंजीरों में जकड़ देते हैं ! यह मेरी खुशकिस्मती है कि मेवाड़ की बहादुर महारानी ने मुझे भाई बनाया है, और बहादुरशाह से मेवाड़ की हिफ़ाज़त करने के लिए मेरी मदद चाही है।

तातारखाँ—तो क्या जहाँपनाह ने उनकी इल्तजा मंजूर कर ली है !

हुमायूँ—यह इल्तजा नहीं, हुक्म है ! राखी आ जाने के बाद भी क्या सोच-विचार किया जा सकता ! यह तो आग में कूद पड़ने का न्योता है। हिन्दुस्तान की तवारीख कह रही है, कि राखी के धागों ने हज़ारों कुर्बानियाँ कराई हैं ! मैं दुनियाँ को बता देना चाहता हूँ कि हिन्दुओं के त्योहार मुसलमानों के लिए भी उतने ही प्यारे हैं, उतने ही पाक हैं।

तातारखाँ—एक मुसलमान के ऊपर एक हिन्दू की तरजीह⋯

हुमायूँ—कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान, यह मैं खूब समझता हूँ। तातारखाँ, मैं जो कुछ कर रहा हूँ, खुदा की हिदायत के मुताबिक कर रहा हूँ !

तातारखाँ—एक काफ़िर कौम को मुसलमानों के खिलाफ मदद दे रहे हैं, क्या यही खुदा की हिदायत है !

हुमायूँ—तुम भूलते हो। तुम सब एक ही परवरदिगार की औलाद हो। हिन्दुओं के अवतारों ने और तुम्हारे पैगम्बर ने एक ही रास्ता दिखलाया है। कुरान शरीफ में साफ लिखा है कि, "हमने हर गिरोह के लिए इबादत का एक खास रास्ता मुकर्रर

कर दिया है, जिस पर वह अमल करता है, इसलिए उस पर झगड़ा न करो'।" तुम्हें साफ़ बताया गया है कि "नेकी यह नहीं है कि तुमने इबादत के वक्त मुँह मशरिक़ की तरफ़ कर लिया या मग़रिब की तरफ़, या इसी तरह की कोई ज़ाहिरा रस्म-रिवाज कर ली, नेकी की राह तो उसकी राह है, जो ख़ुदा पर, आख़िरत के दिन पर, सारी ख़ुदादाद किताबों पर और सारे पैग़ंबरों पर ईमान लाता है, अपना प्यारा धन रिश्तेदारों, अपाहिजों, ग़रीबों, जारत करने वालों, माँगने वालों की राह में और ग़ुलामों को आज़ाद कराने में ख़र्च करता है, जो बात का पक्का है, डर और घबराहट, तंगी और मुसीबत के वक्त धीरज रखता है। ऐसे ही लोग हैं जो बुराइयों से बचने वाले इनसान हैं'।" यही बात हिन्दुओं की मज़हबी किताबें कहती हैं। फिर मज़हब दोनों की दोस्ती के बीच में दीवार कैसे बन सकता है !

तातारख़ाँ—वे हमारे पैग़ंबर को नहीं मानते !

हुमायूँ—और तुम उनके पैग़ंबर को मानते हो ! तुम्हारे कुरान शरीफ़ में तो तुम्हें हुक्म दिया गया है, कि तुम दूसरों के पैग़ंबरों पर भी ईमान लाओ, उनका यक़ीन करो। सचाई जहाँ भी रोशन हुई है, जिस किसी के भी मुँह से रोशन हुई है, सचाई है'। ख़ुदा की साफ़ हिदायत होने हुए भी तुम हिन्दुओं के धर्म

१—मौलाना अब्दुलकलाम आज़ाद द्वारा अनूदित कुरान शरीफ़, सूरा २२, आयत ६६। २—सूरा २, आयत २८५। ३—सूरा ३, ७८।

और अवतारों की इज्जत न करते हुए उनसे लड़ते हो! राजपूत इस वक्त सचाई पर हैं, और बहादुरशाह गुमराह है! सच्चे मुसलमान का काम सचाई का साथ देना है, फिर चाहे उसे मुसलमान के ही खिलाफ़ क्यों न लड़ना पड़े! बस आज ही मेवाड़ की तरफ़ कूच करना होगा।

हिन्दूबेग—मुझे हिन्दू-मुसलमान का खयाल नहीं! पर मैं समझता हूँ कि शत्रुओं को खुला छोड़ कर मेवाड़ की तरफ़ लौट जाना खतरे से खाली नहीं!

हुमायूँ—अब सोचने का वक्त नहीं है! बहन का रिश्ता दुनियाँ के सारे सुखों, दौलतों, ताकतों और सल्तनतों से बढ़कर है! मैं इस रिश्ते की इज्जत करूँगा। सल्तनत जाय, पर मैं दुनियाँ को यह कहते नहीं सुनना चाहता कि मुसलमान बहन की इज्जत करना नहीं जानते! तख्त से उतर कर अगर किसी सच्ची बहन के दिल में जगह पा सकूँ, तो अपने आप को दुनियाँ का सब से बड़ा खुश-किस्मत इन्सान समझूँगा! बहन कर्मवती! तुम्हें मैं [illegible] वह [illegible] दे, जो वह राजपूतों को देती आई है। [illegible], हिन्दूबेग! जल्द कूच तैयार करो!

(राखी हाथ में बाँधते-बाँधते जाता है। सब का प्रस्थान)

[दृश्य-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

[मेवाड़ के एक वन-प्रदेश में एक कुटी के बाहर श्यामा और विजयसिंह]

विजय—माँ आकाश लाल हो गया है !

श्यामा—तो क्या हुआ विजय ! तू इतना व्यग्र क्यों है ! तेरी आँखें क्यों लाल हो रही हैं ?

विजय—देखती नहीं हो माँ, वीर-प्रसू मेवाड़ की भूमि चारों ओर से लाल हो उठी है !

श्यामा—सब देखती हूँ, बेटा !

विजय—माँ !

श्यामा—क्या बेटा !

विजय—मैं होली खेलूँगा !

श्यामा—होली ! आज-कल ! आज-कल कैसी होली ! हाथ में होली !

विजय—मैं रक्त की होली खेलूँगा, माँ ! मैं युद्ध में जाऊँगा (आकाश की ओर हाथ उठा कर) देख माँ, देख !

श्यामा—क्या बेटा !

विजय—क्या तुझे कुछ दिखाई नहीं देता !

श्यामा—कहाँ ?

विजय—वहाँ, आसमान में ! वह, कोई हाथ बढ़ा ! इशारा कर रहा है !

रानी—हाय! किसकी ओर इशारा!

(कौशल्या का प्रवेश)

विदुर—कौशल्या की ओर! (कौशल्या से) रानी, मैं भी लड़ाई में जाऊँगा!

कौशल्या—पुत्र! मेरे लाल पुत्र! तुम राजकुमार होकर भी राजकुमार नहीं हो! मेवाड़ की सेना में तुम्हें उपयुक्त गौरवमय पद नहीं मिल सकता!

रानी—[illegible] है इसलिए!

विदुर—हां, मैं साधारण सिपाही की भांति, अपनी जन्म-भूमि के लिए लड़ कर मर सकता हूँ। अन्य भी तो प्रेम रखते हैं!

कौशल—हम हैं ही साधारण सिपाही—साधारण [illegible] सिपाही।

विदुर—मैं भी तो वही हूँ।

कौशल—नहीं बेटा! यह कैसे भूल जाते कि तुम स्वर्गीय महाराज रत्नसिंह के बेटे हो! मेवाड़ के राजसिंहासन पर तुम्हारा भी अधिकार है! तुम्हारे [illegible] न होगा, [illegible] कम है, केवल इसी कारण इस मेवाड़ के रनवास में तुम्हारे लिए स्थान नहीं है, और तुम्हें इस युद्ध में जगह नहीं मिल सकता! यह सरासर अन्याय है, बेटा! [illegible] की जान का [illegible] के [illegible] होते हैं, पर उनके हृदय में स्नेह नहीं होता, पर उनको [illegible] नहीं होता। यदि वे [illegible] है, तो कोई उनके दरवाजे पर [illegible] की भीख मांगने नहीं आता

है ! फूल क्या तोड़ कर, सड़क पर फेंक देने के लिए हैं ! ना बेटा, मैं इस सामाजिक विषमता को, उच्च जातियों के दंभ के अत्याचार को, सहन नहीं कर सकता ! मैं तुम्हें मामूली सिपाही की तरह सेना में भेज कर तुम्हारा अपमान न कराऊँगा ।

विजय—किसी का अपराध; और किसी को दंड ! बाबा, न मैं भील-कुमार हूँ और न राजकुमार; मैं हूँ केवल एक मेवाड़-निवासी । बाबा ! मेरे शरीर का सीसोदिया वंश से सम्बन्ध है, यह बिल्कुल भूल जाओ । मेवाड़ क्या केवल महाराणाओं का है ? क्या केवल क्षत्रियों का है ? नहीं, वह हम सब का है, हममें से प्रत्येक का है ! वह अपना हृदय चीर कर सबको समान रूप से जीवन देता है । राजा-महाराजाओं को भी और हमको भी ! जब हम पर संकट आया है, तो उसकी आन के सब को जूझना पड़ेगा । उस पर प्राण न्योछावर करने का सब को अधिकार है । बाबा ! मेवाड़ के वीर जो इस देश पर मेघ की त्यों अपने शीश चढ़ा रहे हैं, वह क्या मेवाड़ के राजसिंहासन के लोभ से, सेनापति बनने के लिए ! वे केवल कर्तव्य की [illegible] पर कुर्बान हो रहे हैं ! मैं कुछ नहीं, केवल मेवाड़ का एक सैनिक बनना चाहता हूँ । मेवाड़ को इस समय सेनापतियों की नहीं, सैनिकों की, जन-[illegible] की नहीं, सत्य पर [illegible] करने [illegible] [illegible] है ! माँ, मुझे पद-रज दो ! बाबा, मुझे [illegible] दो ! [illegible], मुझे शक्ति दो कि माँ के चरण में [illegible] ।

[illegible]—जाओ, बेटा, तुम्हारी कीर्ति अमर हो !

भील—सुनो कुमार, यह मैं जानता हूँ कि, वीर-हृदय जन्म-भूमि की मान रक्षा के लिए अपने मानापमान को तुच्छ समझते हैं, किन्तु मेरे दुलारे, मैंने तुम्हें राज-कुमार समझ कर ही पाला है, मैं तुम्हें युद्ध में राजकुमार की मर्यादा के अनुकूल ही काम करने दूँगा! अपने १,००० चुने हुए भीलों की सेना मैं तुम्हारे साथ करता हूँ! तुम किसी के अधीन न हो कर, संकट के समय मेवाड़ी सेना की सहायता करना। चलो बेटा!

रतन—आओ मेरी आँखों के तारे! मेरे हृदय के प्रकाश! मैंने पाप किया था, मेवाड़ के राजकुमार को प्राण भय के लिए वन में जाने से रोका था, उसका प्रायश्चित आज संभव हो! ओ के हृदय! तू क्यों धुकड़-धुकड़ कर रहा है! तू शोक भी है, हर्ष भी है! तुझमें आज प्रलय और सृष्टि दोनों झूलकर रही है। मेरे सूने अन्तर के एकमात्र रतन, तुम जीते-जी—नहीं-नहीं! मैं भूली नहीं हूँ! हाँ, उस दिन कल्ली ने क्या कहा था, "ऐसा कहती है, ऐसा कहती है।" जो कहती है, उसके कानों पर वीर कर्तव्य का उपदेश करना ही होगा।

जय-जय-जय मेवाड़ महान!
होवे भी लाखों पर एक रहे गौरव का उच्चस्थान!

(गाते हुए जाते हैं)

[पटाक्षेप]

भी तो चोट खाए हुए खानदान की औलाद हूँ ! यही सबब है कि मैं इतना बेदर्द हो रहा हूँ । मेवाड़ के गाँवों में आग लगा कर मैं खुशी से फूल उठता हूँ । राणा साँगा आज होते तो देखते कि मुजफ्फरशाह का बेटा, अपने बाप का बदला किस तरह चुका रहा है । काश, वे आज मेरे मुकाबले मैदान में खड़े होते !

([illegible] औलिया का प्रवेश)

[illegible]—तो तुम बोलने में मशगूल होगे ! राणा साँगा ने खुल्लमखुल्ला मैदान में तलवार चला कर मुजफ्फरशाह को गिरफ्तार किया था, तुम्हारी तरह गुजरात के बेकसूर गाँवों में आग नहीं लगाई थी ।

बहादुर—तो कैसे लगाते ! गुजरात के गाँवों में भी तो हिन्दू ही रहते थे । हिन्दुओं के गाँवों को हिन्दू ही कैसे जलाता !

[illegible]—फिर वही हिन्दू-मुस्लिम सवाल ! हिन्दुओं को मुसलमानों से कितनी मोहब्बत है, यह मैं इसीसे जान सकता हूँ कि राणा ने एक मुसलमान [illegible] के लिए [illegible] ! बहादुर ! तू [illegible] हो गया है । [illegible] है, जो तू [illegible] की [illegible] हँसी हँस रहा है ।

बहादुर—[illegible] नहीं [illegible], [illegible] है !

[illegible]—[illegible]

अमल कर सकते हैं! आज अगर आप खुद बादशाह होते और आपके अब्बाजान की किसी ने बेइज्जती की होती, तो आप शायद इस तरह दुश्मनी को भूल जाने की नसीहत न देते! दिल के घाव की टीस कैसी होती है, आप जैसे फकीर क्या जानें!

(मुगल दूत का प्रवेश)

बहादुर—क्या है? कहाँ से आए हो?

मुगल दूत—शाहंशाह हुमायूँ ने यह खत भेजा है।

बहादुर—हुमायूँ ने? अच्छा लाओ!

(लेकर पढ़ता है, पढ़ते-पढ़ते चेहरे का रंग बदल जाता है)

मुन्दराँ—फ़क़ीर बादशाह सलामत, खत में ऐसी कौन-सी बात है, जिसके सबब से [illegible]

बहादुर—(दूत से) अच्छा, तुम बाहर ठहरो। मैं सोच कर जवाब दूँगा।

AGGASCGI
CIKAI

(दूत का प्रस्थान)

बहादुर—(कुछ सोच कर) हूँ! हुमायूँ [illegible] है! आज दुश्मन की औरत का भाई बना है! [illegible] की पुड़िया है। दो मुल्क [illegible], मुसलमान को मुसलमान से लड़ा देना चाहती है। हुमायूँ [illegible] अब [illegible] को नहीं [illegible] के लिए, [illegible] के लिए, अपने मुसलमान भाई से लड़ेंगे! हुमायूँ, तुम्हारी यह [illegible] के [illegible] है।

ुद्र की लहरों को काटते-काटते, उन्हीं में डूब गए! भला, हरों को किसने काटा है !

तीसरा ग्रामवासी—मेवाड़ का दीपक अंतिम बार बड़े ज़ोर से भभक कर बुझ जाना चाहता है।

पहला ग्रामवासी—मैंने तो सोचा है, मेवाड़ को सदा के लिए प्रणाम कर दूँ। घर जल कर खाक हो ही गया! बच्चे और पत्नी भी उसी में स्वाहा हो गए।

दूसरा ग्रामवासी—हम सब का भाग्य एक ही स्याही से लिखा गया है! अब मेवाड़ में रह कर ही क्या करेंगे! राजाओं की लड़ाई में ग़रीब क्यों पिसें! कोई राजा हो, हमारी बला से। हम तो सदा ग़रीब ही रहेंगे।

(चारणी, श्यामा और माया का गाते-गाते प्रवेश)

(गान)

वीरो ! समर-भूमि में आओ,
सोचो तो मेवाड़-निवासी,
माँ को होने दोगे दासी ?
ओ बलिदानों के विश्वासी,
आगे क़दम बढ़ाओ !
वीरो, समर-भूमि में आओ !
अब रिपु ने है त्योरी तानी,
घर में रहना है नादानी,
देह एक दिन है मिट जानी,

शिवा—इस पुण्यभूमि पर छः शताब्दियों से, मेवाड़ के राजवंश, और प्रजा ने समान रूप से जो रक्त चढ़ाया है, वह क्या व्यर्थ जायगा ! जो वीर आज चित्तौड़ के दुर्ग की रक्षा करते हुए प्राण दे रहे हैं, वे क्या मूर्ख हैं ! महाराणा शत्रु से मेल करके आराम से रह सकते थे, पर वे तुम लोगों की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए प्राणों पर खेल रहे हैं और तुम, जो मेवाड़ की शान के प्रमुख आधार हो, इस प्रकार·········

पहला मनसबी—अवश्य ही राणा को अपने स्वाभिमान और राज्य की रक्षा करनी है।

चारणी—हूँ ! मेवाड़ के महाराणा, अपने-आपको प्रजा के सेवक मानते रहे हैं। बाप्पा रावल के काल से आज तक, प्रत्येक महाराणा ने अपने-आपको एकलिंगजी का दीवान ही कहा है। भाइयो, तुम्हारे वास्तविक राजा तो एकलिंगजी हैं, स्वयं परमेश्वर हैं, मेवाड़ के महाराणा नहीं ! वे तो इस ईश्वरीय भूमि के पहरेदार-मात्र हैं !

रत्ना—परमेश्वर और राज में कोई अंतर नहीं होता ! महाराणा परमेश्वर के दीवान हैं, अर्थात् प्रजा के सेवक हैं।

मना—ऐसे उदार राजवंश के साथ तुम विश्वासघात करोगे !

रतन—क्या तुम मरने से डरते हो ! जो सैनिक तुम्हारे लिए जान देने पर हैं, उनके प्रति तुम्हारे हृदय में जरा भी सहानुभूति नहीं ! क्या भेड़ के तरह किसी गड़रिये से बंधे रह

दूसरा ग्रामवासी—मेवाड़ की देवियों की उदारता, वीरता और शक्ति से ही तो मेवाड़ की पताका सदियों से गौरव-शिखर पर उड़ी हुई है।

श्यामा—अच्छा, तो तुम सब समर-भूमि में जाने को तैयार हो!

सब—अवश्य! हम सहर्ष प्राण देने को तैयार हैं!

चारणी—तो चलो, हमें अभी ग्राम-ग्राम जाकर एक बड़ी सेना एकत्र करनी है!

श्यामा—गाओ! चारणी, प्राणों में उन्माद जगाने वाला प्रोत्साहन-गीत गाओ!

(चारणी गाती है, सब दोहराते हैं)

सोचो तो मेवाड़-निवासी
माँ को होने दोगे दासी?
ओ बलिदानों के विश्वासी!
आगे कदम बढ़ाओ।
वीरो, समर भूमि में जाओ।

(गाते गाते सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

(सामने से [illegible] बादलसिंह का प्रवेश)

[illegible]सिंह—रानी ! (कंठावरोध)

[illegible]—क्या हुआ, बादलसिंहजी ! ऐसे घबराए हुए क्यों हो !
[illegible] धड़ाका कैसा हुआ ! यह प्रकाश और धुआँ, क्यों हुआ !

[illegible]सिंह—विधाता का वज्र टूटा है, रानी ! और क्या कहूँ !
[illegible] पर शत्रुओं ने दुर्ग की एक दीवार बारूद से उड़ा दी
[illegible] दीवार का टूटने इतना शोक नहीं, किंतु……(रुक जाता है)

रानी—रुकते क्यों हो ! छिपाते क्यों हो ! कहो-कहो !
[illegible] से भयंकर बात कहते हुए भी क्षत्रियों को कंठावरोध न
[illegible] शरीर ! इतने नहीं क्षत्राणियों का हृदय [illegible] से कोमल
[illegible] हुए भी वज्र से कठोर होता है ! वे सब कुछ सुन सकती हैं,
[illegible] कुछ सह सकती हैं ! कहो, जिस बात से तुम इतने व्यथित हो !
[illegible] हो न !

बादलसिंह—रानी ! इसी ओर की दीवार उड़ी है, जिस ओर [illegible]

[illegible]

अपने भाई, कितनी माताओं को अपने पुत्र, और कितनी पत्नियों को अपने पति इस भूमि को भेंट करने पड़ेंगे, तब हमारा अधिकार इस पर स्थिर हो सकेगा। अर्जुन ने तो केवल मेरी रानी का ऋण चुकाया है, पर आप लोगों को तो अपने देश का ऋण चुकाना है। आप लोगों ने तो इससे अधिक [illegible] है।

एक सामंत—हाँ, हमें प्राण चढ़ाने में कोई आपत्ति नहीं है, पर अब पुरी की रक्षा न हो सकेगी!

दूसरा सामंत—पुरी का जो भाग टूट गया है, उस ओर से ग्रीक सेना प्रवेश करेगी! अब वह विजयी यूरोपियन लोगों के साथ आगे बढ़ेगा, तब उसे कौन रोकेगा!

(ग्रीक सेना के जयजयकार और बाजों का शब्द)

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

का इशारा ही उन्हें बलि-पथ की ओर ले जाता रहा है ! माभी ! आज तुम्हें मामी कहने में शर्म आती है ! तुम तो साक्षात् कराला काली हो, भैरवी हो ! पाषाण का निर्जीव चोला छोड़कर मन्दिर से निकल पड़ी हो ! यह तलवार तो साक्षात् काल-भैरवी की जिह्वा जान पड़ती है !

जवाहर—निश्चय,यह भैरवी की जिह्वा है। बरसों की प्यासी है। चलो वीरो ! आज इसकी प्यास बुझानी है। चारणी, गाओ तो एक शक्ति-गान।

चारणी—(गाती है)

आज शक्ति का तांडव हो !
युग-युग से है खप्पर खाली,
सोच-विचार न कर अब काली,
भर इसमें लोहू की लाली,
यही आज तव आसव हो !
आज शक्ति का तांडव हो !
देखें लोचन लाल रतनारे,
टूट पड़ें अंबर के तारे,
मूर्छित हों निशिचर, हत्यारे,
जय माँ, तव रव भैरव हो !
आज शक्ति का तांडव हो।

(गाते-गाते सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

AGARCHAND BHAIRODAN SETHIA
JAIN LIBRARY
BIKANER

सातवाँ दृश्य

स्थान—चित्तौड़-दुर्ग की टूटी हुई दीवार से कुछ दूर।

[बहादुरशाह सैनिक-वेश में, नंगी तलवार लिये घूम रहा है]

बहादुर—बहादुरशाह की बहादुरी का सिक्का, अब दुनियाँ के दिल पर जम कर रहेगा। चित्तौड़, वही चित्तौड़ जो हिंदुस्तान की बड़ी से बड़ी ताक़तों की हँसी उड़ाता था, आज मिट्टी में मिल कर रहेगा! राणा साँगा, आज तुम होते, तो देखते कि गुजरात का बादशाह मिट्टी का बेजान पुतला नहीं है! उसकी टेढ़ी नज़र चित्तौड़ जैसे सैकड़ों क़िलों को धूल में मिला सकती है। चित्तौड़, तू सदियों से सर उठाए खुदा की शान की तरह मुस-कुरा रहा है, आज खून से नहा कर भी उसी तरह मुसकुरा रहा है। तेरी एक दीवार टूट चुकी है, फिर भी तू हँस रहा है! बला की हिम्मत है! और इसी हिम्मत को हमेशा के लिए पस्त करने का बीड़ा इस बहादुरशाह ने उठाया है।

(मुस्तफ़ा, और एक पोर्तगीज़ सेनाध्यक्ष का प्रवेश)

बहादुर—क्यों सूबेदार, अभी तक हमारी फ़ौज क़िले में दाख़िल नहीं हुई? क्या टूटी हुई दीवार……

मुस्तफ़ा—बादशाह सलामत, एक दीवार टूट चुकी है, पर उससे भी मज़बूत दूसरी दीवार सामने आ खड़ी हुई है!

तीसरा अंक

पहला दृश्य

[धनदास और मौजीराम अपने मकान के दालान में घूम रहे हैं]

धन०—हः हः हः !

मौजी०—आप भी खूब हैं ! बिना कारण हँसते हैं !

धन०—तेरी माँ भी अद्भुत स्त्री है । बादलों में थेगला लगाने वाली है । उसकी मूर्खता पर रोना तो आता ही है, पर, हँसी उससे भी अधिक आती है ।

मौजी०—बादलों में थेगला कैसा !

धन०—जो ... वर्षों से मेवाड़ पर छाए हुए थे, साल उनमें छेद ... आकर एक साथ बरस ... स अभागे देश प... नाम पर जान देकर बेवकूफी से अपने ... बना गए, उन्हें धन-... व्य कब तक पाल...

... मुझे एक बात ...

... ा !

... कैसी

के एक ही प्रकार की आत्मा होती है, उन्हें एक ही से अधिकार होते हैं। समाज यदि इस बात को मानता तो, जिस सिंहासन पर आज विक्रमादित्य बैठे हैं, उस पर मेरा पुत्र विजयसिंह भी बैठ सकता था! किंतु, वह सीसोदिया-वंश में उत्पन्न होकर भी,मेवाड़ के राजमहलों को छोड़ कर जंगलों में रह रहा है। किसलिए, जानती हो? आपके थोथे वंशाभिमान और समाज के अन्याय के कारण! चलो बेटा, मेवाड़ के महलों के गद्दों पर नहीं, मेवाड़ की धूल पर ही तुम्हारा वास्तविक आसन है।

जवाहरबाई—कौन? श्यामा!

श्यामा—हाँ, श्यामा!

जवाहर—मेवाड़ के राज-भवन ने तुम्हें कब स्थान नहीं दिया! तुम्हारा राज्य पर उतना ही अधिकार है जितना मेरा! मैं यहीं विजय के माथे पर टीका करती हूँ, इसे युवराज बनाती हूँ! यह रोली नहीं, मेरी तलवार में लगे हुए रक्त की लाली है।

(विजय को टीका करती है)

विजय—किंतु! मुझे पिताजी ऊपर बुला रहे हैं! मुझे तो उनके पास जाना है। मैं युवराज बना हूँ! एकदम युवराज बन गया हूँ। हः हः हः! कैसी अद्भुत बात है! केवल एक दिन के लिए, बस एक ही दिन के लिए मैं युवराज बना हूँ। जानती हो माताजी, इस रक्त के टीके का ऋण मुझे कल अपने प्राण देकर चुकाना है! इतनेसे समय के लिए मैं आपका अनुरोध क्या टालूँ!

[पटाक्षेप]

तीसरा अंक

पहला दृश्य

[धनराज और मौजीराम अपने मकान के बरामदे में घूम रहे हैं]

धन०—हः हः हः!

मौजी०—आप भी खूब हैं! बिना कारण हँसते हैं!

धन०—तेरी माँ भी अद्भुत स्त्री है। बादलों में पैसा लगाने लगी है। उसकी मूर्खता पर रोना तो आता ही है, पर, हँसी उससे भी अधिक आती है।

मौजी०—बादलों में पैसा फेंका!

धन०—जो विपत्ति के बादल वर्षों से मेवाड़ पर छाए हुए थे, वे सब उसने ढेर हो गए! अभी आजाद एक सप्ताह बरस रही इस अपने देश पर! जो देश के नाम पर जान देकर अपनी बेवकूफी से अपने बच्चों को अनाथ बना गए, उन्हें धनराज का हम्म कब तक याद रख सकता है!

मौजी०—मुझे एक बात मालूम हुई है!

धन०—क्या!

मौजी०—अजी ऐसी वैसी बात नहीं है। वैसी बात आप से भी नहीं छुप सकती!

धन०—अरे कुछ बतलाओ भी!

मौजी०—गणेश जी को भी नहीं सूझ सकती! आपकी तरह वे लंबोदर तो हैं, पर उनकी सवारी चूहे की है! अतः उनका दिमाग भी चूहे की तरह चलता है!

धन०—सवारी से दिमाग का अंदाज लगाया जाय तो कहना पड़ेगा कि महादेव का दिमाग बैल की तरह दौड़ता है।

मौजी०—दौड़ता ही नहीं सींग भी मारता है!

धन०—शीशोदिया-वंश का महादेव जैसा दिमाग से काम करता है। भोला ऐसा कि अपने [illegible] भी वरदान दे दे, और जब भस्मासुर उसीको भस्म करने [illegible] फिर। क्रोधी ऐसा कि तीसरा नेत्र खोलने [illegible] को भस्म करने पर तुल जाय!

मौजी०—वाह, मेरी बात भी [illegible]

धन०—हाँ, हाँ, तू क्या कहता था?

मौजी०—मैं कहता था कि [illegible]

और भी उपयोग है, वही [illegible] का भी है!

धन०—कैसे!

मौजी०—इसीलिए [illegible] से पूछी गयी हूँ है [illegible]

[illegible] में [illegible] और [illegible]

धन०—और मेरे [illegible] का भी [illegible] उपयोग है!

([illegible] और [illegible] है, दूसरी ओर [illegible] है)

धन०—[illegible] की तरह [illegible] क्यों हो! मैं [illegible] हूँ

नहीं जो बाण से बेध दूँगा। बाण चलाना जानता तो बहादुरशाह की सेना को एक ही अग्नि-बाण में समाप्त न कर देता!

(माया का हाथ पकड़ता है)

मौजी०—अर्जुन की तरह हवा में क़िले तो अब भी बाँध सकते हो!

माया—हवा में क़िले तुम दोनों बाँधते रहो। मुझे बहुत काम है। छोड़ो! मुझे बेचारे अनाथों की सहायता करने जाना है।

धन—माया तो चंचल होती ही है, पुराणों में लिखा ही है। वह ग़लत हो ही नहीं सकता! पर इतने सवेरे जाने की क्या ज़रूरत है! अभी बहुत वक्त है! ज़रा ठहर कर चली जाना।

माया—वक्त तुम जैसे अजगरों की तरह पड़ा रहता है क्या!

धन०—वह तो तुम जैसी हिरनियों की तरह उछलता-कूदता भागता रहता है!

मौजी—पर वह भागना दिखाई नहीं देता!

माया—जिनकी हिए की फूट गई हैं उन्हें दिन और रात बराबर है। उनके लिए न वक्त आता है, न जाता है! (बात बदल कर) तो अच्छा, अब मैं जाऊँ!

धन०—और ये पेटियाँ भर कर कहाँ ले चली! कुछ तो बचने दो, देवी!

माया—कुत्ते की दुम सौ बरस नली में रखी जाने पर भी टेढ़ी की टेढ़ी बनी रहती है। यही हाल तुम्हारी तृष्णा का भी है!

(प्रस्थान)

धन०—नदी को बाँधो तो पानी गंदा हो जाय, औरत को बाँधा जाय तो समाज निर्बल हो जाय ! बहो माया, तुम बरसात की बाढ़ की तरह स्वच्छन्द रूप में बहो ! और तिजोरियों के धन को बाढ़ की तरह बहा ले आओ !

मौजी०—आपने कुछ सुना है ?

धन०—क्या ?

मौजी०—यही कि हुमायूँ बादशाह बहादुरशाह से युद्ध करने आ रहा है !

धन०—सच ! तब तो मेरा काम बन गया ! अब पाँचों उँगलियाँ घी में हैं !

मौजी०—और सर कड़ाई में !

धन०—बस अब पौ बारह है ! अब की बार मोटे-मोटे मेढ़ों की टक्कर है !

मौजी०—इससे आपको क्या लाभ ?

धन०—एक युद्ध का लाभ तो मेरी माँ ने न उठाने दिया, पर, दूसरे का तो मैं अवश्य उठाऊँगा ! देश-भक्ति की देश-भक्ति और देश-सेवा की देश-सेवा । एक पथ दो काज ! यश-लाभ भी और अर्थ-लाभ भी ! हुमायूँ की सेना को रसद देने का ठेका मेरे सिवा कौन ले सकता है !

मौजी०—आप की सूझ है, पहले बहादुरशाह को मोर्चे-बन्दी का सामान दे कर लूटा, फिर बहादुरशाह से जा मिले, और अब हुमायूँ को रसद देने की तजवीज़ सोच रहे हैं !

धन—यह रहे तो लोग देश पर जान कुरबान करेंगे। गवर्नमेंट इसी का नाम है और इसके फर्ज़ बहुत हैं। अहा, आज फिर मुझे हुई धन स्तुति याद आ रही है, 'त्रिभुवन, सनातन, शर्मे, धर्म, तुम ही धन-देव हमारे हो।

(बड़बड़ाते एक ओर को प्रस्थान)

कौशी—पिबंति नदः स्वयमेव नोदकं
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः,
धाराधरो वर्षति नात्महेतवे
परोपकाराय सतां विभूतयः

(श्लोक पढ़ते हुए दूसरी ओर को प्रस्थान)

[पटाक्षेप]

दूसरा दृश्य

स्थान—[illegible]

[illegible]

बनाया जाता तो, मक़सद था! इनकी सल्तनत क़ायम रखने का . .

हुमायूँ—तातारख़ाँ! [illegible] आज क्या है, सारी दुनियाँ की सल्तनत में वह एक सल्तनत है। वह है इसलामियत की सल्तनत, मुहब्बत की सल्तनत। सिकन्दरआज़म जिन्होंने यूनान से हिन्दुस्तान तक अपनी सल्तनत क़ायम की थी, आज कहाँ है? कहाँ है उनकी सल्तनत? कहाँ है उनकी ज़िन्दगी भर की कमाई? लेकिन जिन्होंने दिलों को जीता था—वे आज तक ज़िन्दा हैं, वे आज तक हुकूमत करते हैं। उनकी सल्तनत आज तक दुनियाँ के दिल पर इसलामियत की ताक़त के सहारे टिकी हुई है। हज़रत मोहम्मद जिन्होंने इनसान को सारी दुनियाँ से मोहब्बत करने की तालीम दी, आज दिलों के आसमान में, सितारे की तरह चमक रहे हैं। अभी तक वह नेता हमें इशारे से बता रहे हैं कि "धन-दौलत का मज़हब छोड़ और इसलामियत की सल्तनत क़ायम कर!"

हिन्दूबेग—हुज़ूरेआला, सच तो यह है कि आप बादशाह होते हुए भी फ़कीर हैं! मगर हुज़ूर भी मुआफ़ करें, बादशाहत आपकी फ़क़ीरी का बोझ नहीं सँभाल सकती!

तातारख़ाँ—जिन हज़रत मोहम्मद साहब के इशारों पर, चलने का आप दम भरते हैं, उन्हीं के पाक मज़हब को बढ़ाने की कोशिश बहादुरशाह कर रहे हैं! आपको उनका साथ . .

हुमायूँ—बेशक मुनासिब ही है! मज़हब भी कोई दुनियावी

ते हैं, जो नाकिस इनसान के फैलाए फैल सकती है। जरा सो तो, सूरज की रोशनी को फैलाना क्या आदमी का न है? क्या चाँदनी को हम मर्ज़ी से छिटका सकते हैं? हवा हमारा हुक्म मानती है? फूलों की खुशबू कहीं हमारे हने से इधर-उधर जा-आ सकती है? हमारी तदबीरें सब ती हैं? जो खुदादाद चीज़ें हैं, वे खुदा की मर्ज़ी से अपने आप नियाँ में बँट जाती हैं! दीन इसलाम हमारी तलवार से नहीं ल सकता। तलवार से अगर कुछ फैल सकता है, तो मज़हबी तअस्सुब है, ज़बरदस्ती है, बेइंसाफ़ी है, बेईमानी है। मज़हब फैलाने के लिए हमें सिर्फ़ उस पर ईमानदारी से अमल करना चाहिए, दूसरों से ज़बरदस्ती अमल कराने की कोशिश करना, खुदा का काम अपने सर पर लेना है, कुदरत की कारगुज़ारी में टाँग अड़ाना है। मेरी नज़र में तो यह सरासर बेवकूफ़ी है!

तातारख़ाँ—आपकी तरह ऊँची सतह से मैं नहीं सोच पाता। तो इतना ही देखता हूँ और साफ़ देखता हूँ कि बहादुरशाह मुसलमान है, और मेवाड़ के महाराना काफ़िर! मेरे सामने दो में एक को चुनने का सवाल आवे, तो मैं बहादुरशाह ही को चुनूँ! ता जी नहीं चाहता कि आप का साथ दूँ! मैंने तो मुनासिब समझा निहायत अदब से अर्ज़ कर चुका। आगे जो हाँपनाह की मर्ज़ी! (नेपथ्य में गान सुनाई देता है)

"आज खुदा खुद है हैरान!
पिला रहा है तुम्हें तअस्सुब की शराब शैतान

कहाँ लिखा है हमें बताओ खोलो वेद-कुरान
जो न तुम्हारा मजहब माने, ले लो उसकी जान।
मन्दिर-मसजिद काबा-काशी सब में उसकी शान,
एक दीन सारी दुनियाँ का 'नेकी कर इनसान।'
सब में प्रीति निभाना सीखो, बनो न यों हैवान।
छेद रहे हो जिगर खुदा का तुम तलवारें तान।"

(गाते-गाते शाहशेख औलिया का प्रवेश)

हुमायूँ—खुदा की पाक आवाज मेरे कान तक पहुँचाने वाले आप कौन?

शाहशेख—एक अदना-सा फकीर। बादशाह, यह [illegible] का [illegible] शाहशेख औलिया।

हुमायूँ—तो बहादुरशाह ने फिर [illegible] है। [illegible] आपका आना फिजूल होगा। मैं अपना [illegible] नहीं [illegible]।

शाह—[illegible] नहीं छोड़ सकता! [illegible] क्या तुम मेवाड़ की हिफाजत न करोगे? क्या तुम पर [illegible] जादू चल गया!

हुमायूँ—जादू! हाँ जादू मुझ पर [illegible] है [illegible], बहादुरशाह का नहीं, [illegible] की [illegible]। [illegible] मैं बहादुरशाह को सजा दिए बिना न मानूँगा, [illegible] आपकी [illegible] होगी!

शाह—[illegible] हुमायूँ! मैं यहाँ [illegible] आया था! बहादुरशाह मेरा [illegible] है, मैं उसे [illegible] हूँ। [illegible]

फिर चाहता हूँ, कि वह बादशाह न बन कर इनसान बने, अपनी सल्तनत बढ़ाने के लालच को मज़हब के प्याले में न भरे! हुमायूँ! तुम्हें बहादुर के सर से शैतान उतारना होगा! शैतान न उतरे तो उस सर को भी उतारना होगा!

तातारखाँ—शाहसाहब! अपने ही शागिर्द का आप बुरा चाहते हैं!

शाह—भोले आदमी! तू बुरा-भला क्या जाने! जिसके सर पर ज़ुल्म करने का भूत सवार हो जाय, उसके सर को उतारना ही उसकी सब से बड़ी भलाई है! हुमायूँ, तुम जिस रफ़्तार से आ रहे हो, उससे काम न चलेगा। मेवाड़ का खातमा बिलकुल क़रीब है! क़िले की एक तरफ़ की दीवार टूट चुकी है। महाराणा क़िले से निकल कर कहीं भाग गए हैं। क़िले में बचे हुए मुट्ठी भर राजपूत जान पर खेल कर भी कब तक लड़ सकते हैं!

हुमायूँ—चित्तौड़ की एक दीवार टूट गई है, महाराणा भाग गए हैं! शाहसाहब! आप यह क्या कहते हैं! मैं ख़ुदा से माँगता हूँ कि चंबल और चित्तौड़ के बीच की सारी ज़मीन ग़ायब हो जाय या आँधी का कोई झोंका मुझी को उड़ाकर चित्तौड़ के क़िले में पहुँचा दे। मेरी सारी फ़ौज चाहे यहीं रह जाय, पर मैं अकेला ही मेवाड़ की मुसीबत में शामिल होकर, मेवाड़ी राजपूतों के साथ मिल कर, मामूली सिपाही की हैसियत से लड़ सकूँ! बहन कर्मवती के क़दमों की पाक ख़ाक सर पर लगाने का मौक़ा पा सकूँ, और लड़ते हुए जान देकर उसकी राखी का क़र्ज़ चुका सकूँ।

[illegible]—शाबास हुमायूँ ! तू ही सच्चा मुसलमान है, तू ही सच्चा इनसान है। तेरी मुसीबतें भी खूबसूरत होंगी, तेरी मौत भी खुदा के होठों की हँसी की तरह रोशन होगी। [illegible] जा, तुझ पर खुदा की मेहर हो।

(प्रस्थान)

हुमायूँ—बहन कर्णवती ! अपने वालिद के दुश्मन से मदद माँगना, उसे भाई बनाना, उसे अपने [illegible] का सब से पाक और [illegible] दिखा देना, कम फराखदिली नहीं ! बहन का प्यार ! हाय, यह मेरे लिए हमेशा ही सपने की चीज रहा है ! और हम उस अमृत को पीने को तरसते रहे हैं ! आज जब तुम उसके लिए प्याला भर कर बैठी हो, तो तुम्हारे पास तक पहुँचने की ताकत नहीं ! अफ़सोस, [illegible] मेरे [illegible] के पहले हो......

(प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

स्थान—[illegible]

[[illegible]]

[illegible]

कर्मवती—महाराणा बनने का लोभ ! इस मंगल-त्योहार के अवसर पर यह काँटों का मुकुट धारण करने की साध !

भीमराज—वैभव का उपभोग करने के लिए सभी राज-मुकुट सर पर रखना चाहते हैं पर अपनी बलि देने का अवसर आने पर विरले ही इसे छूने का साहस कर सकते हैं। धन्य हो बाघसिंह जी, ऐसा त्याग या तो महाराणा लक्षजी और उनके राजकुमारों ने किया था, या आप कर रहे हैं !

बाघसिंह—उनका-सा त्याग मैं कहाँ से लाऊँगा, भीमराज ! कालिका माता ने उनसे स्वप्न में कहा था—मेवाड़भूमि भूखी है, राज-बलि की इच्छुक है। उन्होंने अपने हाथ में लिए एक-एक राजकुमार को छाती पहना कर, सब को बलि-वेदी पर चढ़ा दिया, और स्वयं भी चढ़ गए ! उस दृश्य की कल्पना कीजिए जब कुमार की माँ मंगल-द्रव्य हाथ में लेकर उनकी आरती करके [illegible] संग्राम-भूमि म [illegible] निछावर करने भेजती थी। [illegible] आरती के समय यदि आँखों से [illegible] भी आँसू निकल पड़ता [illegible], इसलिए [illegible] के साथ मंगल-गान में [illegible]। वह कैसा त्याग [illegible] दिव्य बल था, कैसा [illegible] स्वयं बलि-वेदि [illegible] आ सकते हैं, पर अपने [illegible] पुत्रों को, एक [illegible] नहीं, गोद [illegible] टुकड़े-टुकड़े कर [illegible] केवल जितना [illegible] है ! यह वही जानते हैं, [illegible] का हृदय [illegible] बहर [illegible]

है, या पूँ [illegible]

चौथा दृश्य

स्थान—मेवाड़ी भीलों की एक बस्ती के निकट का मार्ग

समय—संध्या।

[स्माना अकेली इकतारे पर गाती हुई एक ओर से आ रही है]

अविरत पथ पर चलना री।
गति, जीवन का चरम लक्ष्य है;
विरति, मुक्ति, सब छलना री।
अविरत पथ पर चलना री।
'रण में सहसा मरण' महत्व है,
पर, क्या वह जीवन का 'सत' है ?
जीवन तो बलि-पथ शाश्वत है—
अणु-अणु करके गलना री।
अविरत पथ पर चलना री।
सरल, चिता-शय्या पर सोना;
कठिन दुःख सहना—सब खोना,
मिट जाना, पर विकल न होना,
तिल-तिल करके जलना री।
अविरत पथ पर चलना री।

(दूसरी ओर से विजयसिंह का प्रवेश)

विजय—माँ ! तुम किधर ! मैं तो तुम से सदा के लिए विदा लेने आ रहा था।

कर्मवती—हमारी व्यवस्था ! हम क्षत्राणियों की व्यवस्था ! वह तो जवाहरबाई कर गई हैं। हम रणक्षेत्र में लड़ कर प्राण देंगी !

बाघसिंह—यह मैं जानता हूँ, भाभी ! हम लोग क्षत्राणियों का दूध पीकर ही शेर हुए हैं। किंतु, युद्ध में यदि एक भी क्षत्राणी शत्रु के हाथ पड़ गई तो मेवाड़ की कीर्ति-पताका में अमिट कलंक लग जायगा।

कर्मवती—तो हमारे लिए पद्मिनी स्वर्ग से इशारा कर रही हैं। उधर देखो पश्चिमी क्षितिज पर ऊषा की आग जल रही है! वह बता रही है कि हमारा अन्तिम आश्रय जाज्वल्यमान जौहर की ज्वाला है।

बाघसिंह—तब हम निस्सन्देह निश्चिन्त होकर प्राण दे सकेंगे!

कर्मवती—किंतु, चाँदखाँ जी की क्या व्यवस्था की जाय ! उन्हें न तो मरने देना है, और न शत्रु को सौंपना है !

बाघसिंह—उन्हें मैं किसी प्रकार सुरक्षित बाहर निकाल दूँगा।

कर्मवती—मैं यही चाहती हूँ कि जिन चाँदखाँ जी के लिए बहादुरशाह आया है, उन्हें वह हर्गिज न पा सके और इसी में हमारी जीत है।

बाघसिंह—मेवाड़ की सदा जीत है। उसकी हार भी जीत है ! चलो, तो अब कल के वीर-व्रत की तैयारी की जाय।

(सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

चौथा दृश्य

स्थान—मेवाड़ी भीलों की एक बस्ती के निकट का मार्ग

समय—संध्या।

[श्यामा अकेली इकतारे पर गाती हुई एक ओर से आ रही है]

अविरत पथ पर चलना री।
गति, जीवन का चरम लक्ष्य है;
विरति, मुक्ति, सब छलना री।
अविरत पथ पर चलना री।
'रण में सहसा मरण' महत है,
पर, क्या यह जीवन का 'सत' है?
जीवन तो बलि-पथ शाश्वत है—
अणु-अणु करके गलना री।
अविरत पथ पर चलना री।
सरल, चिता-शय्या पर सोना;
कठिन दुःख सहना—सब खोना,
मिट जाना, पर विकल न होना,
तिल-तिल करके जलना री।
अविरत पथ पर चलना री।

(दूसरी ओर से विजयसिंह का प्रवेश)

विजय—श्री! तुम किधर! मैं तो तुम से सदा के लिए विदा लेने आ रहा था।

श्यामा—बेटा विजय, मैं तुझी से मिलने निकली थी। देर तक तेरी बाट देखती रही। जब कुटिया में बैठे-बैठे जी न लगा, तब तेरे मार्ग पर चल पड़ी।

विजयसिंह—आजकल तुम्हारा जी न जाने कैसा हो रहा है! चारणी माँ तुम्हें बहुत याद किया करती हैं। तुम तो आजकल युद्ध के काम में जरा भी मदद नहीं देतीं। उधर आती तक नहीं! यह क्या अच्छा है, माँ?

श्यामा—बेटा, मैं काफी कर चुकी। युद्ध के लिए इससे अधिक क्या किया जा सकता था? इतने सैनिक एकत्र कर दिए हैं कि उनका रक्त पीने को कई सौ बादशाहों और महाराणाओं की आवश्यकता हो। और फिर जीवन, युद्ध से बहुत बड़ा है। तुम लोग युद्ध के बाद ठहर जाना चाहते हो और मैं चलती रहना चाहती हूँ। मुझे अगली मंज़िल की चिंता है, इसमें पहली ही मंज़िल पर रुक नहीं रहना चाहती।

विजयसिंह—तुम्हारा गान सुनकर ही मुझे यह शंका हुई थी, कि तुम्हें युद्ध से विरक्ति हो गई है, तुम्हारे हृदय की चंडी ने जिसके आह्वान पर, शत-शत वीर अपने मस्तक चढ़ाने को निकल पड़े थे, सहसा शांति का रूप धारण कर लिया है।

श्यामा—'सहसा' न कहो बेटा! मेरे ये सिद्धान्त ऊँचे अनुभव और गहरे विचार के बाद बने हैं।

विजय—अच्छा, कहो माँ, तुम कल प्रातःकाल जौहर के महाव्रत में सम्मिलित न होगी?

श्यामा—नहीं!

विक्रमसिंह—क्या यह हम लोगों के लिए लज्जा की बात न होगी! क्या इससे तुम्हारा गौरव कम न होगा!

श्यामा—तुम यदि मुझ जैसी माँ पाने पर लज्जित होते हो, तो मैं क्या करूँ! मेरे पास उसका उपाय नहीं है। किंतु मैं नहीं समझती हूँ कि मरने के लिए भी किसी आयोजन की आवश्यकता है, गौरव की अपेक्षा है। तुम लोग सर्वस्व-त्यागी सैनिक हो, पर गौरव पाए बिना तुम एक कदम भी नहीं उठाना चाहते। क्या इसी कीर्ति-लोलुपता के आधार पर तुम दूसरों को उपदेश देने का अधिकार चाहते हो!

विक्रम—तुम तो नाराज़ हो गईं, माँ! मैंने तो यों ही कहा था। मुझे क्षमा करो।

श्यामा—इतने खिन्न मत हो, बेटा! मैंने केवल तुम्हारे दंभ को……(कुछ ठहर कर) तो तुम जौहर के विषय में जानना चाहते हो! अच्छा, सुनो! राजमाता के आग्रह पर मैं इतने वर्षों बाद रनिवास में गई। राजकुमार के संरक्षक और मेवाड़ के राणा की माँ होने के कारण रजपूतनियों को मेरा सम्मान तो करना पड़ा, पर, उनके हृदय में फिर भी एक व्यंग्य छिपा रहा। उनके बड़प्पन, कुलीनता और आचार का दंभ मेरे हृदय पर आघात करने लगा। फिर भी अपने मन से मैंने माता कर्मवती पर अपनी जौहर-व्रत में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट कर ही दी। उन्होंने सहर्ष स्वीकृति दे दी, पर मैंने इन

संबंध में कई राजपूत-[illegible] ओं के [illegible] करते सुना। कहाँ वे और कहाँ एक तुच्छ [illegible] चिता में जलनी ! [illegible] उनके [illegible] सहन कर सकता था ! मैंने सोचा यह जौहर [illegible] के लिए है। सर्वसाधारण का जौहर तो [illegible]

विजय—यह [illegible] अनुभव कर रही हो।

श्यामा—गरीबों [illegible] दुखों की आग में [illegible] में कष्टों और संकटों का मुकाबिला [illegible] अधिक वीरता का काम समझती हूँ। [illegible] में कट मरना तो बच्चों का खेल है।

विजय—तब क्या तुम यह समझती [illegible] शिष्ट मेवाड़ी वीर केसरिया वस्त्र पहन [illegible] करने निकलेंगे, वे कायर हैं !

श्यामा—मैं यह नहीं कहती। पर, इसमें [illegible] नहीं कि वे कष्ट-सहन से घबराते हैं, दुःख और [illegible] प्राणों में भर कर भी, अमरता की हँसी हँसने [illegible] ज्योत्स्ना नहीं जानते। वे अपनी माँ-बहनों और [illegible] को जौहर की ज्वाला में जलाने के बाद ही मरने का साहस कर सकते हैं। तारीफ तो उन गरीबों की है जो घर में स्त्री-बच्चों को दाने-दाने के लिए तरसते छोड़ कर, बीमारों को तड़पते छो

अपने घरवाले छोड़ कर बलि-पथ पर जाते हैं और संसार के कल्याण के लिए, दुखियों और पीड़ितों की सेवा में तिल तिल करके क्षय होते हैं, अपना सर्वस्व लगा देते हैं। मुझे तो यही आदर्श प्रिय है। मैं तो इसी पर आकर रुक गई हूँ।

विजय—तुम्हारी बातों से मुझे विस्मय होता है, माँ! आखिर, तुम क्या करना चाहती हो?

रमाना—मैं! मैं चाहती हूँ ठंडे दिमाग से अपने सर्वस्व को कन-कन करके पीड़ितों की सेवा में क्षय करना, मैं चाहती हूँ अपने हाथों अपने प्राणप्रिय पति और पुत्र को मरण की ज्वाला में झोंक कर जीवित रहना और उनके वियोग के एक-एक क्षण की दारुण कसक को आजीवन सहना, सहते-सहते हँसना, खेलना और काम करना, कलेजे पर पत्थर रख कर दुखियों की सेवा करना, अपने कलेजे को ऐसा बनाना कि वह पत्थर के नीचे दबा रहने ही को वेदना न समझे, बल्कि उसे उठा कर दुनियाँ की उलझनें सुलझाता हुआ जीवन के कंटकमय-पथ पर हँसता-खेलता, उछलता-कूदता चले। मैं तलवार के एक वार में या चिता की एक लपट में जीवन को समाप्त नहीं कर देना चाहती। मेरे विचार में जीवन एक यंत्रणा है, नियति का वज्र-लेख है। हमें उसे सहना ही होगा और उस 'सहने' को भूल कर, तुच्छ समझ कर उन लोगों की सेवा-सहायता करनी होगी, जो अधिक पीड़ित हैं, अधिक दुखी हैं।

विजय—तुम्हारी बातों से मेरी अंतरात्मा की ध्वनि पर प्रहार होता है, मेरे जीवन की धारणाओं पर आघात पहुँचता है।

सुंदर दृश्य होगा वह ! उसे स्वर्ग से देख कर सैनिकों की आत्मा तृप्त हो जायगी ! घरों के जला दिए जाने के कारण और पुरुषों के मर मिटने के कारण असंख्य निरपराध ग्रामीण बालक-बालिकाएँ और स्त्रियाँ राह की भिखारिनें बन जाएँगी। उनमें अन्न के एक-एक दाने के लिए प्राणघातक कलह होगी। माँ बेटे को खा जाना चाहेगी और भाई बहन को। उन महाक्षुधित नर-कंकालों की क्षुधा के दावानल में सहस्रों सेठ धनदासों का सर्वस्व तिनके की तरह भस्म हो जाएगा। उसके बाद पड़ेगी महामारी। माँ बेटे को और भाई बहन को दम तोड़ते देखेगा, पर किसी में इतनी शक्ति न होगी कि दूसरे के मुँह में पानी की दो बूँदें डाल दे। उस समय मेरा कार्यक्षेत्र उपस्थित होगा, मेरे कार्य की वास्तविक उपयोगिता सिद्ध होगी।

विजय—तुम्हारी इन बातों से मेरा हृदय काँप उठा है, माँ। युद्ध के इस पहलू पर मैंने कभी विचार ही नहीं किया था। वास्तव में बड़ी भीषण स्थिति होगी वह। क्या कहती हो, "तब तुम अपना काम करोगी !" क्या काम करोगी, माँ ! जल्द बताओ, साफ़-साफ़ बताओ।

श्यामा—मैं युद्ध करूँगी, बेटा ! दुःख के विरुद्ध, क्षुधा के विरुद्ध, रोगों के विरुद्ध और दीनता के विरुद्ध। जैसे तुम लोग कायरों को भी अपनी वीरवाणी से उत्तेजित करके सैनिक बना देते हो, वैसे ही मैं भी उन्हीं दीन-दुखियों में से समर्थतर व्यक्तियों को छाँट कर प्रोत्साहित करके, स्वावलंबन और पर-सेवा का पाठ

जाओ, हँसते हुए वीर-व्रत का पालन करो। मेरे भाग्य में यह गौरव नहीं है। अपने पति और पुत्र को खोकर मेरा हृदय दीवाना हो गया है, वह हर गरीब के अनाथ बच्चों को अपने बच्चे बना लेना चाहता है, उनकी सेवा में अपने को भुला देना चाहता है।

विजय—तुम्हारा व्रत महान है, माँ! पर मेरा हृदय उससे संतुष्ट नहीं होना चाहता। मानों उसका निर्माण ही अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध युद्ध करने के लिए हुआ है। उसीमें उसे वास्तविक आनंद मिलता है। मैं तो संसार की शांतिरक्षा के लिए युद्ध को अत्यंत आवश्यक समझता हूँ। मुझे अपने सैनिक होने पर गर्व है, लज्जा नहीं, क्योंकि मैं न्याय के साथ हूँ। वास्तव में हम दोनों का लक्ष्य एक ही है, माँ! तुम यदि पीड़ितों की सेवा करना चाहती हो, तो मैं उनकी सहायता करना। तुम यदि उन्हें अपना स्वास्थ्य वापस दिलाना चाहती हो, तो मैं उन्हें अपना स्वत्व वापस दिलाने के लिए जान पर खेलना चाहता हूँ। भेद केवल इतना है कि मेरा कार्य जहाँ समाप्त होता है, तुम्हारा कार्य वहाँ प्रारंभ होता है। जो कुछ हो, मैं अपना रास्ता चुन चुका हूँ। तुम्हारे साथ चलने का मोह है, पर मेरी अंतरात्मा अपना निर्णय बदलने को तैयार नहीं। मेरा यह नम्र रुचिभेद है, माँ! और यह तुम्हारे ही दिए हुए विवेक की सृष्टि है। आशा है, तुम इसे सहन करोगी और मुझे रणक्षेत्र में प्राण देने के लिए

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—चित्तौड़ दुर्ग का भीतरी भाग

समय—प्रातःकाल

[महारानी कर्मवती तथा अन्य राजपूत-रमणियाँ शृंगार करके खड़ी हुई हैं]

कर्मवती—अग्नि की पुत्रियो ! क्या मैं विश्वास करूँ कि तुम्हें माँ की गोद में बैठते हुए ज़रा भी भय न लगेगा ! बोलो, वीरांगनाओ ! क्या तुमने मरण को वरण करने का अंतिम निश्चय कर लिया है ? क्या तुम हँसते-हँसते अपनी आहुति देने को तैयार हो ! मैं फिर कहती हूँ, जिसे प्राणों का मोह हो, जिसे संसार के सुख-दुःख की अभी लालसा हो, जिनकी आँखें इतनी बेशर्म हों, कि मेवाड़ को परतंत्र अवस्था में देख सकें, वह अब भी लौट जाय !

एक वीरांगना—नहीं माँ ! यह कैसे हो सकता है ! मुर्दों की भाँति जीना कौन पसंद कर सकता है ! हमारे स्वामी, पुत्र, बंधु, सभी जननी जन्मभूमि की मान-रक्षा के लिए प्राण दे चुके हैं, जो बचे हैं, वे भी आज हमारी ओर से निश्चिंत होकर मर-मिटना चाहते हैं ! माँ, अब हमारा संसार रह ही कहाँ गया है ? विश्वास रखिए, हम हँसते-हँसते जौहर की ज्वाला में प्रवेश करेंगी !

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—चित्तौड़ दुर्ग का भीतरी भाग

समय—प्रातःकाल

[महारानी कर्मवती तथा अन्य राजपूत-रमणियाँ शृंगार करके खड़ी हुई हैं]

कर्मवती—अग्नि की पुत्रियो ! क्या मैं विश्वास करूँ कि तुम्हें माँ की गोद में बैठते हुए ज़रा भी भय न लगेगा ? बोलो, वीरांगनाओ ! क्या तुमने मरण को वरण करने का अंतिम निश्चय कर लिया है ? क्या तुम हँसते-हँसते अपनी आहुति देने को तैयार हो ? मैं फिर कहती हूँ, जिसे प्राणों का मोह हो, जिसे संसार के सुख-दुःख की अभी लालसा हो, जिनकी आँखें इतनी बेशर्म हों, कि मेवाड़ को परतंत्र अवस्था में देख सकें, वह अब भी लौट जाय !

एक वीरांगना—नहीं माँ ! यह कैसे हो सकता है ! मुर्दों की भाँति जीना कौन पसंद कर सकता है ! हमारे स्वामी, पुत्र, बंधु, सभी जननी जन्मभूमि की मान-रक्षा के लिए प्राण दे चुके हैं, जो बचे हैं, वे भी आज हमारी ओर से निश्चिंत होकर मर-मिटना चाहते हैं ! माँ, अब हमारा संसार रह ही कहाँ गया है ! विश्वास रखिए, हम हँसते-हँसते जौहर की ज्वाला में प्रवेश कर सकेंगी !

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—चित्तौड़ दुर्ग का भीतरी भाग

समय—प्रातःकाल

[महारानी कर्मवती तथा अन्य राजपूत-रमणियाँ शृंगार करके खड़ी हुई हैं]

कर्मवती—अग्नि की पुत्रियो ! क्या मैं विश्वास करूँ कि तुम्हें माँ की गोद में बैठते हुए ज़रा भी भय न लगेगा ? बोलो, वीरांगनाओ ! क्या तुमने मरण को वरण करने का अंतिम निश्चय कर लिया है ? क्या तुम हँसते-हँसते अपनी आहुति देने को तैयार हो ? मैं फिर कहती हूँ, जिसे प्राणों का मोह हो, जिसे संसार के सुख-दुःख की अभी लालसा हो, जिनकी आँखें इतनी बेशर्म हों, कि मेवाड़ को परतंत्र अवस्था में देख सकें, वह अब भी लौट जाय !

एक वीरांगना—नहीं माँ ! यह कैसे हो सकता है ? मुर्दों की भाँति जीना कौन पसंद कर सकता है ? हमारे स्वामी, पुत्र, बंधु, सभी जननी जन्मभूमि की मान-रक्षा के लिए प्राण दे चुके हैं, जो बचे हैं, वे भी आज हमारी ओर से निश्चिंत होकर मर-मिटना चाहते हैं ! माँ, अब हमारा संसार रह ही कहाँ गया है ? विश्वास रखिए, हम हँसते-हँसते जौहर की ज्वाला में प्रवेश कर सकेंगी !

श्यामा—मैं भी तो तुम्हें स्वतंत्र विचारक देखना चाहती हूँ, बेटा! जाओ, तुम अपने रास्ते पर जाओ। मुझे भी यह सहिष्णुता विरासत में मिली है। यह आज न होती, यदि तुम्हारे नाना मेरी शिक्षा और संस्कृति के लिए विशेष व्यय न करते। यह उन्हीं का वरदान है कि मैं घने कुहरे के बीच भी अपना प्रकाश देख पाती हूँ, नहीं तो कहाँ जीवन की गंभीर गुत्थियाँ और कहाँ मुझ-जैसी नीच भीलनी!

विजय—अच्छा माँ! मैं जाता हूँ। शायद इस जन्म में फिर कभी तुम्हारे दर्शन न होंगे।

(चरण छूता है)

श्यामा—(सर पर हाथ रख कर) जाओ बेटा! भगवान तुम्हें वीरगति दें।

(विजय जाता है। श्यामा की आँखों में आँसू आ जाते हैं)

श्यामा—हाय, हृदय! तू विकल क्यों होता है?

(गान)

अविरत पथ पर चलना री,
गति जीवन का परम लक्ष है,
विरति मुक्ति सब छलना री!

(गाते-गाते प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—चित्तौड़ दुर्ग का भीतरी भाग

समय—प्रातःकाल

[महारानी कर्मवती तथा अन्य राजपूत-रमणियाँ [illegible] खड़ी हुई हैं]

कर्मवती—अग्नि की पुत्रियो! क्या मैं विश्वास करूँ कि तुम्हें [illegible] की गोद में बैठते हुए जरा भी भय न लगेगा! बोलो, वीरांगनाओ! क्या तुमने प्राण को बलि करने का अंतिम निश्चय कर लिया है! क्या तुम हँसते-हँसते अपनी आहुति देने को तैयार हो! मैं फिर कहती हूँ, जिसे प्राणों का मोह हो, जिसे संसार के सुख-दुःख की अभी लालसा हो, जिसको [illegible] [illegible]

[illegible]

कर्मवती—धन्य हो, बहनो ! ऐसी ही माताएँ तो विश्व-विजयी संतान उत्पन्न करती हैं ! आज हमारे जीवन का सब से महान त्योहार है। आज अग्नि ही हमारा अंतिम आधार रह गया है ! हम अग्नि से उत्पन्न हुई हैं, और उसी में मिलने जा रही हैं। बड़े सौभाग्य से ऐसी मृत्यु मिला करती है। अमरत्व के मार्ग पर जाने वाली बहनो ! हम कोई अनोखी बात नहीं कर रहीं। मेवाड़ के पहले जौहर में अग्नि-प्रवेश करने वाली वीरांगनाओं के साथ महारानी पद्मिनी हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं ! अहा ! आज कैसा सुंदर प्रभात है ! क्या कभी आसमान इतना लाल हुआ था ! मेवाड़-माता के भाल पर आज सौभाग्य का अमर सिंदूर लगा कर हम चली जायँगी ! बहनो ! प्रस्तुत हो जाओ !

दूसरी वीरांगना—हम प्रस्तुत हैं, माँ ! हम आज अभिमान से फूली नहीं समाती ! आपके दर्शन-मात्र से हम उन्मत्त हुई जा रही हैं। क्षत्राणियों के लिए यही तो सब से सुंदर मौत है, यही तो सब से ऊँचा पद है।

कर्मवती—प्यारी बहनो ! हमारे अवशिष्ट वीर रात-बलि देने जा रहे हैं ! उनके प्राणों में अपने कुटुंबियों का मोह शेष न रह जाय, मौत के अतिरिक्त उनका कोई संबंधी न बच रहे, वे निर्मोही होकर, पागल होकर, युद्ध कर सकें, इसलिए उनके जाने के पूर्व ही हमें अपने अस्तित्व को जौहर की ज्वाला में समाप्त कर देना है ! अ-हा-हा ! आज हमारे सौभाग्य पर सूर्य

...हैं रहा है! सल्तनत की रेत! आज तू अग्नि से चमक
...है! सिन्ध के सपूत! आज तुम में उमंग की लहरें उठ
...ी हैं, इस उपवन में बसंत आ रहा है। यही तो समय है
...ने का। अब इनकी सुहागरात आने वाली है! हाँ,
...हो रहने!

(गाती है)

सजनि, साज दो स्वागत करो री!
दुलहिन अंबर और अवनि है,
आती अ अंबर की ध्वनि है,
यह सुहाग की रात, सजनि, है,
सिर मेरे पर सपना करो री!
सजनि, साज दो स्वागत करो री!

यही स्वर्णिम वैभव [illegible],
ऐसे मन में हुआ [illegible],
इस [illegible] साज का [illegible],
[illegible] [illegible] [illegible] करो री,
सजनि, साज दो स्वागत करो री!

[illegible] [illegible] [illegible] की [illegible],
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible],
यह [illegible] का और [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] करो री!
सजनि, साज दो स्वागत करो री!

(नेपथ्य में हर हर महादेव, जय एकलिंगजी की, जय काली काली की, जय मेवाड़ भूमि की, आदि आवाज़ें आती हैं)

कर्मवती—लो, वे वीर तैयार हो गए हैं! अब हमें शीघ्रता करनी चाहिए। (घुटने टेक कर बैठ जाती है, और हाथ जोड़ कर आसमान की ओर देखने लगती है) स्वामी! इतने वर्षों तक आपको प्रतीक्षा करनी पड़ी! क्षमा करो प्राणाधिक! जब आपने स्वर्ग की यात्रा की, तब मेरे पेट में उदयसिंह था! कितनी इच्छा थी सती होने की, पर तुम्हारे उस अंश की रक्षा के उत्तरदायित्व ने जकड़ दिया। आज उसका प्रायश्चित कर रही हूँ। स्वामी, तुम रूठे तो नहीं हो! जिस मेवाड़ के लिए तुमने प्राण दिए, उसकी रक्षा मैं न कर सकी! आखिर नारी ही तो हूँ! तुम्हारे शत्रु को भी राखी भेज कर भाई बनाया, पर वह भी समय पर न आ सका! बंगाल से मेवाड़ तक का मार्ग क्या थोड़ा है! क्या तुम मेरे इस कार्य से असंतुष्ट हो। नहीं! सच कहते हो, मैंने भूल नहीं की! हाँ, तो अब मैं तुम से मिल सकूँगी! (उठ कर खड़ी हो जाती है) हाँ, अब चलो, बहनो! चिता पर चढ़ने का यही मुहूर्त है! बस वही गाना-गीत गाते हुए चलो!

(गान)

सजनि, मरण को वरण करो री!

(गाते-गाते सब का प्रस्थान, बाघसिंह, दीवानजी, विजयसिंह तथा अन्य सामन्तों का प्रवेश)

बाघसिंह—मेवाड़! जन्मभूमि मेवाड़! तेरी रक्षा पर

रखने में हमें सफलता नहीं मिली ! आत्म-वेदना से हमारे प्राण जल रहे हैं ! मेवाड़ के देवता ! यदि तुम इतनी बलियों से भी प्रसन्न नहीं हुए तो आज इन बचे हुए वीरों की भी आहुति पड़ जाय ! यह भी कैसे कहें कि यही अंतिम आहुति है, यही पूर्णाहुति है ! मेवाड़ के खँडहर आज अट्टहास कर रहे हैं, दुर्ग के शिलाखंड मुसकरा रहे हैं, मेवाड़ का खून से तर अंतस्तल इस सर्वनाश के समय भी अभिमान से फूला नहीं समाता !

(एकाएक तीव्र प्रकाश होता है, सब उसी ओर देखने लगते हैं)

बाघसिंह—देखो, वीरो ! मेवाड़ के गौरव का दृश्य देखो ! जिस देश की माताएँ, देश को परतंत्र देखने के पहले जौहर की ज्वाला में जल जाना पसंद करती हैं, उसे कोई कब तक परतंत्र रख सकता है ! रानी कर्मवती जी ! तुम अमरलोक को चलीं ! बंधुओ, अग्नि-पुत्रो ! इस संसार में अब हमारा कोई नहीं रहा ! पत्नी, पुत्र, सगे-संबंधी, सब समाप्त हो गए ! अब किसी की चिंता हमें नहीं रही ! हे वीर-प्रसविनी माताएँ, हँसते-हँसते चिता में प्रवेश कर गईं ! हा-हा-हा ! इस आग को देख कर रोना नहीं आता, हृदय उत्साह से [illegible] हो उठता है ! आओ, हम सब [illegible] ! [illegible] ! मेवाड़ के [illegible] [illegible] रहेगी, [illegible]

[illegible] ! [illegible] [illegible] मेवाड़ का [illegible]

...ौरव की गर्व भरम पर! मनुष्यों पर शासन करने की उसकी इच्छा पूरी न हो सकेगी! हाँ, तो करो दंडवत!

(जिस ओर प्रकाश हो रहा है, उसी ओर सब दंडवत करते हैं)

मानसिंह—(दंडवत करते हुए) हमें वर दो देवियो! शक्ति दो माताओ! साहस दो बहनो! हम तुम्हारी तरह ही मृत्यु का आलिंगन कर सकें।

(सब उठते हैं)

मानसिंह—"हर हर महादेव!"

सब—"हर-हर महादेव!"

(सब का प्रस्थान)

[पट-परिवर्तन]

छठा दृश्य

स्थान—मेवाड़ की एक अंधेरी कंदरा।

[महाराणा विक्रमादित्य बंधे हुए हैं, अस्त-व्यस्त अवस्था में पड़े हैं]

विक्रम—कैसा अन्धकार है, यह [illegible]! और [illegible] है जैसे जीवन की [illegible]! मैं—[illegible] [illegible] [illegible], जिसकी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible]! [illegible], यह [illegible] नहीं [illegible] है! [illegible] है [illegible] [illegible] है, [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible]

से मैं भाग आया! महाराणा लखनजी और उनके पुत्र आकाश के नक्षत्रों की पंक्ति में बैठ कर, मुझ पर हँस रहे हैं। कह रहे हैं,—'इसे मरना भी न आया'! वे गोरा बादल की आत्माएँ मुझे शाप दे रही हैं। स्वर्ग में देवी पद्मिनी हँस रही हैं। उनकी व्यंग्यमयी मुसकान मानों कह रही है—इससे स्त्रियाँ ही अच्छी! अभिशाप-ग्लानि, घृणा और अपयश के बोझ से दबा हुआ जीवन मैं कब तक ढो सकूँगा! मैं मेवाड़ का महाराणा था—अब तो राह का भिखारी हूँ—पर उससे भी अधिक दुखी हूँ। अब तो चला नहीं जाता! (एक पेड़ के नीचे बैठते हैं) हाय, चित्तौड़ का न जाने क्या हुआ!

(धनदास का प्रवेश)

धन०—ओहो! यहाँ तो महाराणा विक्रमादित्य बैठे हैं! तब तो मैं ठीक जगह आ निकला।

विक्रम—(खड़े होकर) उपहास न करो, धनदास! महाराणा विक्रमादित्य तो मर गए, उसी दिन मर गए जब उन्होंने चित्तौड़ का दुर्ग छोड़ा, उसी क्षण मर गए जब उन्हें प्राणों का मोह हुआ! अब तो यह एक राह का भिखारी है, एक अभागा, निराश्रय व्यक्ति!

धन०—इतने व्यथित हैं आप अपने अभिमान से! आज पड़ता है, चन्द्र में भी कलंक प्रकट हुआ है!

विक्रम—कलंक प्रकट हुआ है! यह तुम क्या कहते हो!

धन—दयासागर मित्रों को कहते हैं, और सामने ही मित्र

नहीं रहते. [illegible] की। [illegible]
[illegible] है कि जब तक [illegible] नहीं [illegible]। [illegible]
[illegible] नहीं हो [illegible], किन्तु [illegible]
[illegible]। [illegible]
। [illegible] है। [illegible]
[illegible] नहीं [illegible]।

[illegible]—[illegible]
[illegible]!

[illegible]—[illegible]! [illegible]! [illegible]
[illegible] है! [illegible]
[illegible] है।
[illegible] है। [illegible]
[illegible] है, [illegible]
[illegible] है— [illegible]
[illegible]
[illegible] है, [illegible]
[illegible] है। [illegible]
[illegible]
[illegible] है [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] है

विक्रम—ठीक कहते हो धनदास ! पर, यह तो बताओ अभागे चित्तौड़ का क्या हुआ !

धन०—अब यह पूछ कर क्या करोगे, महाराणाजी ! इसकी ज्योतियाँ महाज्योति में मिल गईं, और खँडहरों पर, उल्लुओं की तरह, शत्रु बैठे राज्य कर रहे हैं ! मेवाड़ का सर्वस्व स्वाहा हो गया !

विक्रम—क्या कहा ?—सर्वस्व स्वाहा हो गया ?

धन०—हाँ, महाराणा सब कुछ समाप्त हो गया ! आपकी माताजी ने साक्षात् दुर्गा की तरह युद्ध किया, सैकड़ों को मार कर [illegible] का जौहर दिखा कर, रणभूमि में सुला दिया ! इसके बाद [illegible] भी रणभूमि [illegible] नहीं ! [illegible], सोने को भी [illegible] कहीं जगह मिली !

विक्रम—[illegible] हो, माँ ! मैंने कौन सा पुण्य किया था जो तुम-सी माँ पाई, और तुमने कौन सा पाप किया था जो मुझ-सा पुत्र [illegible] ! तुमने [illegible] ग्रहण कर [illegible] पुत्र के लिए [illegible] ! [illegible] का प्रायश्चित्त कर दिया ! (मुझे [illegible] हैं, माँ, मुझे क्षमा करो ! [illegible] में [illegible] ! मैं [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] ! माँ, [illegible] [illegible] है, [illegible] [illegible] ! [illegible] कोई नहीं कर [illegible], कोई नहीं कर [illegible] ! ([illegible] है) [illegible] ! [illegible] !

धन०—जिन्हें मरने की जल्दी थी वे मर गए। कैसे मूर्ख थे, उनसे आपका इंतज़ार भी न किया गया। और मारने वाले भी ऐसे मूर्ख थे कि आपकी प्रतीक्षा किए बिना ही उन्होंने सब को मार डाला! अब युद्ध नहीं है महाराणा, राजभक्ति दी जा चुकी है!

विक्रमादित्य—बिना राजा के राजभक्ति कैसी! पगड़ी किसने पहनी थी!

धन—बाघसिंह जी ने! माता कर्णवती और १२००० क्षत्राणियाँ जौहर की ज्वाला में भस्म हो गईं, और राजपूत अपने सर्वस्व में अपने ही हाथों आग लगा कर, केसरिया वस्त्र पहन कर अंतिम क्षण तक उन्मत्त होकर युद्ध करते हुए, स्वर्ग सिधार गए!

विक्रम—धन्य हो बाघसिंह जी, धन्य हो माता कर्णवती! धन्य हो मेवाड़ के वीरो! मैंने प्राणों की रक्षा के लिए मेवाड़ का महाराणा का पद छोड़कर जंगल की शरण ली, और बाघसिंह जी ने प्राणों की आहुति देने के लिए राजचिह्न धारण किया! कितना अंतर है दो महाराणाओं में! माँ कर्णवती ने मेवाड़ का अपमान अपनी आँखों से न देखने के लिए आग में जल कर प्राण दे दिए और मैंने प्राणों की रक्षा के लिए मेवाड़ को अपमान की ज्वाला में जलने के लिए छोड़ दिया। धनदास! मैं मरूँगा! युद्ध करता हुआ मरूँगा। मैं बहादुरशाह से युद्ध करूँगा।

धन०—अब सेना ही कहाँ है!

विक्रम—मरने जाने वाले को सेना की क्या आवश्यकता ! मैं युद्ध करूँगा ! अकेला ही युद्ध करूँगा ! मैं मरूँगा ! शत्रु-दल का संहार करते हुए वीरों की मौत मरूँगा।

बन०—आप मरेंगे तो मेवाड़ का महाराणा कौन होगा ! मैं तो असल में आपको मेवाड़ के सिंहासन पर बैठने का निमंत्रण देने आया था !

विक्रम—मेवाड़ के सिंहासन पर ! असंभव बात मुँह पर क्यों लाते हो ?

बन०—सेर के लिए सवा सेर सभी जगह मौजूद है ! मेवाड़ के सिंहासन पर शत्रु बैठ सके, यह कब संभव है ! अ. शताब्दियों तक आत्म-बलि चढ़ाते रहने पर भी क्या विधाता के दफ्तर में मेवाड़ पर सीसोदिया-वंश का अधिकार प्रमाणित नहीं हुआ ! चलिए महाराणा, यह विलम्ब आपके अनुकूल नहीं।

विक्रम—कहाँ ले चलना चाहते हो, बनवीर ! मुझे तो केवल मरने से काम है।

बन०—यही करने की इच्छा आप की हो, तो आइए, पर इतनी जल्दी क्या है ? अच्छा याद है, कर्मवती जी ने हुमायूँ को राखी भेजी थी 'यह राखी का धागा तुम्हें भेजा जाता है' मैं इसी का पूरा उत्तर आपके पास लाया हूँ।

विक्रम—हुमायूँ का पूरा उत्तर ! यह कैसी बात है बनवीर !

बन०—इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है, राणा ! आप

जानते नहीं मैं राजनीतिज्ञ जो हूँ। जिधर हवा का रुख, उधर हमारा मुख! यही तो संसार का सबसे बड़ा राजनीतिक सिद्धान्त है। चलिए महाराणा!

विक्रम—नहीं बनवीर, मेवाड़ का सिंहासन तुम जैसे कायर के लिए नहीं है।

बन०—चलिए महाराणा, मैं हाथ जोड़ता हूँ, चलिए! कोई मनहूस सिंहासन पर बैठ जायगा, तो नाचने-गाने का सारा मज़ा ही किरकिरा हो जायगा! जिन्हें मरना था मर गये। आप मेवाड़ के महाराणा बन कर, देवियों की चिता की ज्वाला पर हाथ सेंक लीजिए। हिन्दुस्तान के [illegible] आन्दोलन में मेवाड़ के वीरों को अपनी [illegible], अपना [illegible] [illegible] दीजिए। उस नाश में जाना होगा तब हम और आप दोनों साथ चलेंगे, यहीं की बहार भी देखी जायगी।

(हाथ पकड़ कर ले जाता है)

[पट-परिवर्तन]

सातवाँ दृश्य

स्थान—[illegible]

[[illegible]]

[illegible]

बहादुर—ग़ैर मुमकिन है, मुमताज़! जो बला तुमने उस दिन देखी है, जिसने १२००० राजपूतनियों को राख कर दिया, क्या तुम समझते हो, कि वह बुझ गई! नहीं-नहीं, वह हरएक मेवाड़ी के दिल में जल रही है! अलाउद्दीनशाह के अन्दर मैं हुकूमत का तख़्त नहीं रख सकता। वह रखा ही नहीं जा सकता!

पोर्तगीज़ सेनापति—ज़ोर के ज़ोर पर सब कुछ किया जा सकता है, जनाब!

बहादुर—यह ख़याल बिलकुल ग़लत है! क्या तुमने उन राजपूतों को नहीं देखा, जो घायल होकर पड़े हुए थे! हमें क़िले में दाख़िल होते देख कर उन्होंने अपने हाथ से अपने कलेजे में छुरी मार ली! ऐसे बहादुर लोगों पर हुकूमत करने का सपना देखना, हवा में क़िले बाँधना है! ज़ोर लोगों को मार ही तो सकती है। पर जो ख़ुद ही मरने को तैयार हैं, उन्हें मार डालने की धमकी से कैसे दबाया जा सकता है! जो मरना जानते हैं, वे ग़ुलाम होकर रह ही नहीं सकते! अलाउद्दीन ने भी तो मेवाड़ को जीता था—पर कितने दिन वह मुसलमानों के हाथ में रहा! हम मुसलमान, जो औरतों को बुर्क़े में बंद करके रखते हैं, क्या जानें कि वे राजपूतनियों की तरह तलवार भी चला सकती हैं! राजपूत लोग माँ के दूध के साथ ही बहादुरी के घूँट पीते हैं! ऐसी माँओं के बच्चों पर हुकूमत नहीं की जा सकती। जो धुआँ उस दिन क़िले से उठा था, क्या वह मिट चुका है!

हर्गिज नहीं, वह मेवाड़ के दिल में छा रहा है और किसी दिन कहर की बिजली गिरावेगा !

सुल्ताना—जब आपको ऐसा पछतावा हो रहा है, तो आपने अपनी इतनी फौज कटाकर चित्तौड़ पर कब्जा ही क्यों किया ? इधर नजर ही क्यों उठाई ?

बहादुर—सिर्फ बदला लेने के लिए !

सुल्ताना—क्या वह पूरा हो गया ?

बहादुर—नहीं, बिल्कुल नहीं ! मेरा मेवाड़ की फतह मेरी जिंदगी की सबसे बड़ी हार है ! [illegible] का बेटा बहादुरशाह चाहता था, [illegible] उसके कदमों पर [illegible] ! [illegible] नहीं ! वह नहीं हुआ ! [illegible] में [illegible] आज भी [illegible] है। [illegible] रहे हैं। [illegible] किया था, वह भी तो पूरा नहीं किया ! [illegible] उन [illegible] को [illegible] [illegible] कौन हार है !

सुल्ताना—[illegible] हुआ, [illegible] [illegible] रहे हैं !

बहादुर—[illegible] [illegible]

(एक गुप्तचर का प्रवेश)

बहादुर—कहो, क्या खबर लाये हो?

गुप्तचर—बादशाह सलामत! हुमायूँ बिल्कुल करीब आ गए हैं।

बहादुर—बिल्कुल करीब!

गुप्तचर—जी हाँ, दो दिन के अंदर-अंदर आप चित्तौड़ में उसी तरह घिर जायेंगे, जिस तरह मेवाड़ के महाराना को आपने घेरा था।

बहादुर—तातारखाँ! देखो, महाराना साँगा की बहादुर औरत आग में जल कर बहिश्त में चली गई, मगर, जन्नत में अभी तक मेवाड़ पर वही हुकूमत कर रही है! हमें इसी वक्त किले से बाहर निकलना चाहिए।

तातारखाँ—क्या किले में हम ज्यादा महफूज नहीं हैं!

बहादुर—हर्गिज नहीं। किले के भीतर रह कर लड़ना खुदकुशी करना है। रसद बंद हुई और मौत! यह हमारा मुल्क भी नहीं, यहाँ रसद का इन्तजाम हो सके! यहाँ फौज भी इस तरह हम नहीं पा सकते! राजपूतों जैसी बहादुर कौम भी अगर हारी है तो सिर्फ दीवारों की मदद लेने की वजह से। हम हमेशा बाहर से लड़े और भाग सके, और ये लोग किले में लगातार घिर कर एक-एक कर खत्म होते रहे। बहादुरशाह ऐसी बेवकूफी कभी नहीं कर सकता। हम सुबह मैदान में लड़ेंगे।

पोर्चु० सेनापति—पोर्चुगीज तोपखाने के जो हुमायूँ की

मुखालिफत नहीं कर सकते। जिन लोगों ने, भाइयों से बढ़ने भाइयों के सर कलम किए हैं, वे हम मुसलमानों को कहाँ मारते हैं। मैं तो हिंदुओं के कदमों में बैठ कर मोहब्बत करना सीखना चाहता हूँ।

विजय—हिंदू और मुसलमान, ये दोनों ही नाम धोखा हैं, हमें अलग करने वाली दीवार है। हम सब हिंदुस्तानी हैं!

हुमायूँ—हिंदुस्तानी ही नहीं, इनसान हैं। हमें अब दुनिया की हर किस्म की [illegible] चाहिए। हमारा काम भाई के [illegible] नहीं, भाई को [illegible] लगाना है, भाई को ही नहीं [illegible] है। दुनिया के हरएक इनसान [illegible] में हुआ देना है। [illegible] हिंदू और मुसलमानों को [illegible] है, वह [illegible] न हुए, मैं [illegible]

विजय—दोनों ही [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

विक्रम—बादशाह साहब ! मैं देखता हूँ, मेवाड़ की रक्षा करने की क़ीमत आपको बहुत ज़्यादा देनी पड़ रही है !

हुमायूँ—बहन के प्यार की क़ीमत, इन राखी के धागों की क़ीमत, दुनियाँ की बादशाहत, और बहिश्त की सल्तनत से भी बढ़ कर है। महाराणा ! मुझे अफ़सोस इसी बात का है कि, मैं ठीक वक्त पर आकर बहन कर्मवती के क़दमों की खाक सर पर न चढ़ा सका। उसकी कमी को उनकी चिता की धूल से पूरी करता हूँ। मैंने मेवाड़ आने में जो देर की उसकी सज़ा मुझे अभी भुगतनी है ! चलिए महाराणा, आपको बाक़ायदा मेवाड़ के तख़्त पर बैठा कर अपने सर से राखी का कुछ कर्ज़ उतार दूँ ! पूरा कर्ज़ तो उस दिन उतरेगा जब सारी मुसलिम क़ौम की बहनें हिंदू भाइयों के हाथों में बेहिचक राखी बाँधने की हिम्मत करेंगी, और सारी हिंदू क़ौम की बहनें मुसल्मान भाइयों के हाथों में दिली मुहब्बत के साथ अपनी पाक राखी बाँधने की मेहरबानी करेंगी, जब हमारी आँखों से पापों का मैल धुल जायगा ! चलिए महाराणा, आपको सिंहासन पर बैठा देने के बाद, शेरखाँ से अपनी किस्मत का फ़ैसला करूँगा। हुमायूँ, मुसीबतों से डरता नहीं है।

(सब चलने लगते हैं)

हुमायूँ—ठहरो ! एक दफ़ा और बहन की चिता पर अपना सर झुका दूँ ! फिर यह सर धड़ पर क़ायम रहे, न रहे ! एक मर्तबा और अपनी बहिश्त में बैठी बहन से माफ़ी माँग लूँ, फिर